सूची

प्रस्तावना

यह एक विडम्बना है कि नाटक रचनात्मक साहित्य का एक महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली अग होते हुए भी अपने सृजन और विकास के सम्बन्ध में इतना स्वतन्त्र नही है जितनी कि कविता या कहानी। कविता अथवा कहानी लिखते समय साहित्यकार किसी भी वाह्य परिस्थिति का पावन्द नही होता। उसकी कृति अपने में सम्पूर्ण होती है और वह पाठको से सीधा सम्पर्क स्थापित कर लेती है। दूसरे शब्दों में कवि या कथाकार परिस्थिति का सम्पूर्ण प्रभुत्व-सम्पन्न स्वामी होता है और उसकी कृति अपनी अभिव्यञ्जना के लिए किसी अन्य साधन पर आश्रित नही होती। परन्तु नाटककार और नाटक के सम्वन्ध में यह बात नहीं कही जा सकती। नाटक की रचना, खेलने के उद्देश्य से की जाती है और नाटककार को नाटक की रचना करते समय रगमच के उस चौखटे के विस्तार का ध्यान रखना पडता है, जिस पर वह खेला जायगा। इस प्रकार नाटक की रचना और उसका विकास एक वाह्य उपकरण (External factor) पर निर्भर होता है और नाटक-साहित्य के इतिहास पर इसका गहरा प्रभाव पड़ा है।

सस्कृत-साहित्य में नाटक का एक विशेष स्थान है। नाटक एक बहुत ही उन्नत और विकसित रूप में हमें सस्कृत में मिला है। परन्तु हिन्दी-साहित्य में अपेक्षाकृत नाटक का अभाव है और आश्चर्य होता है कि सस्कृत-साहित्य की इस वहुमूल्य देन से हम लाभ नहीं उठा सके हैं। रन्तु इसके लिए हम साहित्यकारो को दोषी नहीं ठहरा सकते, क्योंकि

नाटक का विकास पूर्ण रूप से नाटककारो के हाथ मे नही है। नाटक का विकास रगमच के विकास के साथ बँधा है और रगमच जन-साधारण के मनोरजन का एक साधन है, जो स्वय जन-साधारण की रुचि के साथ बँधा है। वह युग बीत गया जब राज-दरबारो मे नाटककारो को सम्मानपूर्ण स्थान दिया जाता था और रगमच राजसी वैभव और ऐश्वर्य का महत्त्वपूर्ण अग था। राज-दरबारो की छत्र-छाया से निकलकर रगमच को अपने अस्तित्व के लिए जन-साधारण की ओर देखना पडा। जन-साधारण से नाटक को प्रोत्साहन मिला। ऐतिहासिक और विशेषतया धार्मिक नाटक बहुत प्रचलित हुए। परन्तु इस बीच एक मूल परिवर्तन हो गया। रगमच सजाने और नाटक खेलने के लिए आर्थिक साधनो की आवश्यकता होती है। राज-दरबारो में यह समस्या राज्य-कोष द्वारा हल होती रही। रामलीला और रासलीला-जैसे धार्मिक नाटक सार्वजनिक धार्मिक सस्थाओ द्वारा खेले जाते रहे। परन्तु मनोरजन के साधन के रूप में रगमच ऐसे लोगो के हाथ में चला गया जो इसे एक व्यवसाय के रूप में देखते थे और उसमे अपना धन लगाकर लाभ की आशा करते थे। भारत मे इस प्रकार रगमच का पुनरुत्थान एक व्यावसायिक रूप में हुआ। स्थान स्थान पर थियेटर-कम्पनियो की स्थापना हुई। इनमें से अधिकतर कम्पनियाँ पारसियो के हाथ में थी। इस कारण इसे 'पारसी-थियेटर' की सज्ञा दी गई।

पारसी-थियेटर ने रगमच का विकास अग्रेजी-रगमच के आधार पर किया। इन नए प्रकार के रगमचो ने जन-साधारण मे नाटक को बहुत प्रचलित कर दिया। परन्तु नाटक का यह विकास साहित्यिक और सास्कृतिक आधार पर नही हुआ था, व्यावसायिक आधार पर हुआ था। इस कारण यह नाटक मनोरजन-प्रधान था और इसमे अश्लील गानों, भौंडे मजाको और अर्धनग्न नाचों की भरमार थी। यह ठीक है कि इन नाटको में देश-भक्ति, वीरता, बलिदान और सत्य की चर्चा होती थी परन्तु नाटको का सामान्य वातावरण नीचे स्तर का होता था।

रगमच की सर्वप्रियता ने भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, राधेश्याम कथा-वाचक और आगा हश्र काश्मीरी जैसे नाटकारो को भी जन्म दिया जिन्होने साहित्य में नाटक की परम्परा को फिर से सजीव किया। इसके अतिरिक्त जयशकरप्रसाद जैसे साहित्यकारो ने नाटक-साहित्य के कोष में वृद्धि की यद्यपि उनका रगमच से कोई सीधा सम्बन्ध नही था।

परन्तु भारत में रगमच की सर्वप्रियता सिनेमा की स्थापना के कारण फिर लुप्त होने लगी। क्योकि नाटक मनोरजन का एक साधन बन गया था और रगमच की स्थापना व्यावसायिक रूप में हुई थी इस-लिए सिनेमा से उसकी सीधी टक्कर हुई। नाटक के इस आन्दोलन की पृष्ठभूमि में कोई सास्कृतिक या साहित्यिक मान्यताएँ तो थी नही जिनसे इसे शक्ति मिलती, इसलिए जन-साधारण की रुचि नाटक से हटकर सिनेमा पर केन्द्रित होने लगी और नाटक का एक बार फिर पतन होने लगा।

सिनेमा के वैज्ञानिक आविष्कार ने जहाँ नाटक को रगमच से निर्वासित कर दिया वहाँ रेडियो के आविष्कार ने 'ब्राडकास्ट-स्टुडियो' मे इसका पुनर्वास किया। १६३६ में भारत में रेडियो-स्टेशन खोले गए और उनसे प्रसारित होने वाले कार्यक्रमो में नाटक को विशेष स्थान मिला। यह नाटक को एक नई चुनौती थी। प्रथम बार नाटककार को मनोरजन के मतवालो की सीटियो, तालियो और हू-हा से मुक्ति मिली। रेडियो के लिए नाटक लिखते समय नाटककार को श्रोताओ का मुँह बन्द करने और उन्हें फर्नीचर तोडने से बाज रखने के लिए 'लैङ्गिक घूस' (Sexual bribery) देने की आवश्यकता न थी। दूसरे अब उसका नाटक देखा नही सुना जा सकता था और क्योकि कानो का सम्बन्ध सीधा मस्तिष्क से है इसलिए वह अब श्रोतागणो के मस्तिष्क को अधिक सुविधा से सम्बोधित कर सकता था। तीसरे रेडियो से प्रसा-रित होने वाला नाटक थियेटर-हॉल या सिनेमा-गृह में नहीं सुना जाता है इसलिए श्रोतागणो की पाँतो में सहसा उनकी माताओ, बहनो और

भाइयो की माँगें भी शामिल हो गईं जिसका फल यह निकला कि नाटककार से अश्लील गानो और उत्तेजनाप्रद नाचो तथा बाजारी मजाको के स्थान पर सभ्य, सौम्य और स्वच्छ साहित्य की माँग होने लगी। इस प्रकार रेडियो-नाटक व्यवसायिक रंगमच के विष को चूस लेने वाला जहरमोरा सिद्ध हुआ। इसके अतिरिक्त रेडियो-नाटक ने नाटककार को रंगमच की उन पाबन्दियो से मुक्त कर दिया जो उसकी कल्पना को कैद किये हुए थी। क्योकि स्थान और समय को केवल आवाजो (Sound effects) द्वारा सूचित किया जा सकता था इसलिए नाटक की हरकत और गति तीव्र की जा सकती थी। नाटककार स्थान और समय के कारागार से मुक्त हो गया था।

जिन लेखको ने रेडियो-नाटक की नीव डाली उनमें इम्तयाजअली 'ताज', कृष्णचन्द्र, सआदतहसन मण्टो, उपेन्द्रनाथ अश्क और राजेन्द्रसिंह बेदी के नाम उल्लेखनीय हैं। इनके नाटक कला के सर्वोत्तम नमूने भले ही न हो परन्तु उनका एक ऐतिहासिक महत्त्व है, इस तथ्य से इन्कार नही किया जा सकता।

इस संग्रह के नाटको के अध्ययन से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि कहानियो की भाँति नाटको में भी कृष्णचन्द्र ने सामाजिक वास्तविकता (Social reality) को अपना विषय बनाया है। उन्होने अपने प्रत्येक नाटक में सामाजिक परिस्थितियो और सामाजिक मान्यताओ का अध्ययन किया है और उनके नाटको में उस तूफान का पता मिलता है जो समाज में एक क्रान्ति ला रहा था। 'बेकारी' नाटक इस संग्रह का सबसे कमजोर नाटक है। परन्तु इस प्रेरणाहीन नाटक में भी कृष्णचन्द्र की दृष्टि एक सामाजिक वास्तविकता 'बेकारी' पर लगी हुई है। नाटक के पात्र 'भैयालाल' और 'श्यामसुन्दर' के चरित्र-चित्रण कलात्मक ढग से नही किये गये हैं, परन्तु ये पात्र 'वास्तविक' हैं और नवयुवको के जीवन की सबसे गम्भीर और महत्त्वपूर्ण समस्या की ओर सकेत करते हैं, इससे इन्कार नहीं किया जा सकता। 'बेकारी'

कृष्णचन्द्र का सबसे पहला नाटक है जो अक्तूबर '३७ में लाहौर से प्रसारित हुआ। इसमें यह स्पष्ट रूप से झलकता है कि एक कहानीकार नाटक लिखने का प्रथम प्रयास कर रहा है और नाटक और कहानी की टैकनीक को गड-मड कर रहा है। वह एक गम्भीर सामाजिक समस्या को अपने नाटक का विषय बना रहा है, परन्तु उस समस्या के नाटकीय तत्त्व चुनने में सफल नहीं हो सका है। इस नाटक के बाद सितम्बर १९३८ में 'हजामत' नाटक प्रसारित हुआ। वास्तव में यह रूसी लेखक आन्द्रेफ की एक पैरोडी का रूपान्तर है और कृष्णचन्द्र के शब्दों में "इसका प्लाट और एक हद तक सवाद भी आन्द्रेफ की एक पैरोडी से लिया गया है जिसके लिए मैं उस महान् रूसी लेखक का कृतज्ञ हूँ क्योकि जिस गहरे और सच्चे व्यग्य को उसने अपने नाटक में व्यक्त किया है वह हमारे देश के वातावरण पर भी पूर्णतया लागू होता है।" यह नाटक यद्यपि कृष्णचन्द्र की मूल (Original) कृति नहीं है परन्तु इसमें नाटक की टैकनीक को अधिक सफलता से निभाया गया है।

'दरवाज़ा' कृष्णचन्द्र का तीसरा नाटक है, जो अगस्त '४० में दिल्ली से प्रसारित हुआ। नाटक को पढने से प्रतीत होता है कि यह नाटक रेडियो के किसी विशेष प्रोग्राम की आवश्यकता पूरी करने के लिए लिखा गया है। नाटक का अन्त इस सन्देह की पुष्टि करता है, क्योकि 'कान्ता' के पात्र में विद्रोह की जो चिनगारी भडकती दिखाई देती है उसको देखते हुए नाटक का अन्त सुखद नही होना चाहिए था। परन्तु इस नाटक में 'कान्ता' का चरित्र-चित्रण करके कृष्णचन्द्र ने समाज और नैतिकता की खोखली होती हुई बुनियादो का चित्रण किया है। उन्होने इस वास्तविकता को पेश किया है कि गरीबी और भूख के सामने नैतिकता एक निर्जीव और बेकार वस्तु बनकर रह जाती है। एक सभ्य और सुसस्कृत घराने की लडकी जब अपने परिवार को भूख और गरीबी के अन्धकार में घिरा पाती है तो वह अपना सतीत्व बेचने के अतिरिक्त और कोई मार्ग नही देख पाती--

"कान्ता—जब सब दरवाजे बन्द हो जायें तो उस समय भी स्त्री के लिए एक दरवाजा सदा खुला रहता है।

शान्ता—तुम क्या कर रही हो ?

कान्ता—इस ससार में पुरुष स्वामी है और नारी दासी। पुरुष खरीदार है और नारी बिकाऊ वस्तु। पुरुष कुत्ते और नारी उसकी भूख मिटाने वाली हड्डी। पुरुष राखी बँधवाना पसन्द नही करते, वे राखी तोडना पसन्द करते हैं।"

कान्ता के इन शब्दो के विरुद्ध हमारा सभ्य और आदर्शवादी अस्तित्व चाहे कितना ही विद्रोह करे परन्तु उस सचाई से इन्कार नही कर सकता जो इन शब्दो में व्यक्त की गई है। समाज का नैतिक विधान कैसे टूट रहा है इसकी एक हल्की सी झलक हमें इस नाटक मे मिल जाती है।

यदि 'दरवाजा' में हमें सामाजिक पतन की एक झलक मिलती है तो 'नीलकण्ठ' में दृश्य-के-दृश्य हमारे सम्मुख प्रस्तुत किये गए हैं। इस नाटक को मैं एक बहुत सफल और प्रभावशाली नाटक मानता हूँ। नाटक के दो दृश्य हैं। प्रथम दृश्य मे शिव-पार्वती कैलाश की चोटी पर बैठे हैं और एक जिज्ञासु अपनी तपस्या के बल पर उन तक पहुँच जाता है और शिव-रूप देखने का अनुरोध करता है। शिवजी उसे समझाते हैं कि शिव-रूप देखने की शक्ति किसी मनुष्य में नही है। परन्तु जब वह बहुत अनुरोध करता है तो शिवजी अपना असली रूप दिखाते हैं और उनके तेज से जिज्ञासु अन्धा हो जाता है। इस दृश्य में [illegible] ने शिवजी से सम्बन्धित एक बहुत ही साधारण सी कथा को नाटक का रूप दिया है। परन्तु इस दृश्य में उन्होंने जो वातावरण पैदा किया है वह प्रशंसनीय है—शब्दो द्वारा उन्होंने कैसे-कैसे चित्र प्रस्तुत किये हैं—

"पार्वती—तूफान की भयंकर भँवर में एक बिन्दु-सा है जिसके चारों ओर यह सारा तूफान चक्कर काट रहा है और

वह आपका नाम है।

जिज्ञासु—महाराज, महाराज आप लुप्त हुए जा रहे हैं, इसी मृत्यु के राग में लुप्त हुए जा रहे हैं।

शिवजी—देखो, जिज्ञासु देखो!

जिज्ञासु—गगा की फूटती धारा फैलती जा रही है। डमरू की ध्वनि तेज होती जा रही है। मस्तक की आंखो के लाल-लाल डोरो मे ज्वाला फूट रही है। गगा की धारा ने ससार को अपनी लपेट में ले लिया है। मस्तक की आंख की ज्वाला ब्रह्माण्ड के एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैल गई है। तेज, चहुँ ओर तेज-ही-तेज!... समस्त ब्रह्माण्ड मे अब इस तेज के अतिरिक्त और कुछ दिखाई नही पडता।"

और फिर अन्धकार का वर्णन—

"जिज्ञासु—अंधेरा, अंधेरा—भयानक, भयकर अंधेरा—इस भीषण अन्धकार की छाया ने मेरी आत्मा को घेर लिया है, कानो में मौत का राग गूंज रहा है।"

परन्तु कृष्णचन्द्र की कला की कुशलता, कल्पना की व्यापकता, व्यग्य की तीव्रता और सामाजिक अध्ययन और विश्लेषण की गहराई का पूर्ण परिचय नाटक के दूसरे दृश्य में मिलता है। कल्पना एक रौद्रपूर्ण बिजली की भांति कौंधती है और समाज की तहो में पलती हुई अन्धकार की शक्तियाँ हमारी आंखो के आगे अपने नग्न रूप म आ जाती है। शिव और पार्वती इस ससार में जीवन का अर्थ ढूंढने के लिए आते है और प्रवचना, छल, कपट, अधर्म का जो वीभत्स रूप उन्हे इस ससार मे दिखाई देता है उसे देखकर शिव का चित्त म्लान और खिन्न होता है और वे कह उठते हैं—"मनुष्य, मनुष्य को खाए जा रहा है" और पार्वती की आत्मा घृणा और विद्रोह से भर जाती है—'इन लोगो की आत्माएँ अन्धी हो गई है, इनके हृदयो को पाप ने ढक लिया

है, इनके चेहरे झूठ, कपट और धोखे से पुते है—महाराज क्या इन्ही लोगो के लिए आपने विष का प्याला पिया था ?" दया और धर्म के आधार पर बने हुए नैतिक विधान के खोखलेपन का इतना सफल और पूर्ण चित्रण इतने सक्षिप्त रूप मे कम नाटको में देखने को मिलेगा।

परन्तु इसी दृश्य में हमें कृष्णचन्द्र की प्रतिभा का एक और अकुर फूटता दिखाई पडता है—मानव-समाज के भविष्य के प्रति उनका आशावाद और सामान्यता और सहृदयता के आधार पर समाज के नव-निर्माण में विश्वास। 'पागल' के पात्र मे कृष्णचन्द्र ने हमें दार्शनिक के रूप में भी सम्बोधित करना चाहा है।

'काहिरा की एक शाम' 'नीलकठ' से सर्वथा भिन्न नाटक है। इसमें बडे भावुकतापूर्ण मानवीय सम्बन्धो का अध्ययन किया गया है। समाज में नारी पुरुष के आधीन है। उसका व्यक्तित्व स्वतन्त्र नही है और जीने का अधिकार उसे पुरुष की दासता स्वीकार करके प्राप्त करना पडता है। नारी-जीवन की इस ट्रेजेडी को नाटक मे बडे मार्मिक रूप मे प्रकट किया गया है—रेवाज के चगुल से मुक्ति पाने के लिए हसीना का सघर्ष वास्तव मे उस सघर्ष का प्रतीक है जो नारी-जाति सामाजिक क्षेत्र में अपनी स्वतन्त्रता और अधिकारो के लिए कर रही है। 'सूत्रधार' के पात्र में नाटककार ने पुरुष-जाति के उदार विचार वाले वर्ग को प्रस्तुत किया है जो हर क्षेत्र में विकास, प्रगति और पुनर्समाजयोजन का हामी है। नाटक का वातावरण वास्तव में काहिरा के रूमानी वातावरण का चित्रण करता है और शैली मे मादकता और रस का प्रवाह है। टैक्नीक की दृष्टि मे यह नाटक कृष्णचन्द्र के अन्य नाटको स उत्तम है।

'सराय के बाहर' का कृष्णचन्द्र के नाटको म वही स्थान है जो 'अन्नदाता' का कृष्णचन्द्र की कहानियो में। यही नही मुझे ना इन कृतियो में एक गहरा सम्बन्ध दिखाई पडता है। मुझे प्रतीत होता है मानो 'सराय के बाहर' की ट्रेजेडी ने बढते-बढते 'अन्नदाता' की भीषण सामूहिक ट्रेजेडी का रूप धारण कर लिया था और 'अन्नदाता' में आ

कलाकार सितार हाथ मे लिए कलकत्ते में मरा पाया गया वह 'सराय के बाहर' के 'कवि' के अतिरिक्त और कोई नही था।

मेरी इस धारणा का कारण यह है कि कृष्णचन्द्र ने इन दोनो कृतियो में सामूहिक जीवन की ट्रेजेडी का अध्ययन किया है। 'सराय के बाहर' में अन्धे भिखारी और उसकी बेटी मुन्नी की व्यक्तिगत ट्रेजेडी का वर्णन नही है। उनके जीवन में कृष्णचन्द्र ने उस पूरे वर्ग के जीवन का अध्ययन किया है जो कभी किसान थे परन्तु सामन्ती शोषण के कारण आज भिखारी है और अपना सम्मान और अपनी पुत्रियो का सतीत्व गँवाकर जूठे टुकडे पाते हैं। अन्धे भिखारी का चरित्र भिखारी का चरित्र नही बल्कि उस इन्सान का चरित्र है जो भीख माँगने पर विवश है परन्तु जिसकी आत्मा में एक सम्मानपूर्ण जीवन बिताने की इच्छा अभी तक जीवित है। इस मानवीय ट्रेजेडी को व्यक्त करने के लिए नाटककार ने कवि के पात्र को जन्म दिया है। 'कवि' एक व्यक्ति नही है, वह एक आत्मा है—एक भावुक कलाकार की आत्मा, जो जीवन के वीभत्स रूप को देखती है परन्तु कुछ कर सकने की शक्ति और क्षमता अपने में नही पाती—वह धरती के कोने-कोने से आँसू चुनती फिरती है परन्तु घावो पर फाहा नही रख सकती। वह अपने को प्रेमी नही 'राही' समझता है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे स्वय कृष्णचन्द्र कवि के पात्र में इस प्रश्न का उत्तर ढूंढ रहे है कि क्या एक कलाकार का कर्त्तव्य आँसू चुनने से अधिक कुछ नहीं है ? क्या उसकी कला की माँग इसी बात पर समाप्त हो जाती है कि वह इस ट्रेजेडी को दर्शक ही के रूप में देखता रहे और निश्चेष्ट आँसू बहाता रहे ? क्या उसका धर्म यह नही है कि वह सराय के बन्द दरवाज़े को तोड डाले और मुन्नी की लाज को लुटने से बचा ले ? इस नाटक में कृष्णचन्द्र किसी निर्णय पर नही पहुँचते और उनका कवि मुन्नी को छोड़कर चल देता है। परन्तु जब यही कवि बगाल में भुखमरी का शिकार हो जाता है तो कृष्णचन्द्र इस निर्णय पर पहुँचते हैं कि कलाकार का कर्तव्य

आसू चुनने तक सीमित नहीं है। यदि वह अत्याचार और शोषण के विरुद्ध आवाज़ नही उठायगा तो एक दिन स्वय वह और उसकी कला दोनो ही मृत्यु का ग्रास बन जायेंगे। 'सराय के बाहर' में कृष्णचन्द्र की कला ने जिस चुनौती को स्वीकार नही किया था 'अन्नदाता' में उस चुनौती को स्वीकार करना या न करना उनकी कला के जीवन-मरण का प्रश्न बन गया है। हर्ष की बात है कि उन्होने इस चुनौती को स्वीकार कर लिया है। इस प्रकार 'सराय के बाहर' एक नाटक ही नही है बल्कि एक प्रयोग भी है जो कृष्णचन्द्र ने कला और कलाकार के कर्तव्यो का क्षेत्र निर्धारित करने के लिए किया है।

इस सग्रह के नाटको के अतिरिक्त कृष्णचन्द्र ने दो-चार नाटक और लिखे हैं जिनमे 'पराजय के बाद' उल्लेखनीय है। इन नाटक में कृष्णचन्द्र मानो एक नई उड़ान के लिए अपने पख तोल रहे हैं और अपनी कलात्मक शक्तियो को आज़माकर यह विश्वास करना चहते हैं कि इस यात्रा में उनकी शक्तियाँ उनका साथ दे सकेंगी। इस नई उड़ान में कृष्णचन्द्र की कलात्मक शक्तियो ने उनका पूरी तरह साथ दिया है या नही, उसका उत्तर उनके नाटको मे नही तो उनकी कहानियो में अवश्य मिल जाता है। कृष्णचन्द्र की कला ने कृष्ण के विचार (Thought) का साथ ही नही दिया है बल्कि उसे एक सुन्दर, स्वस्थ और साहित्यिक रूप भी प्रदान किया है।

रेवतीसरन शर्मा

५ भार्गव लेन,
तीस हज़ारी, दिल्ली

बेकारी

नाटक के पात्र

नैयालाल

श्यामसुन्दर

मजदूर, डॉक्टर, डॉक्टर की पत्नी, आदि

बेकारी

[हिन्दू होस्टल में ४४ नम्बर का कमरा, गन्दा-धूल से अटा हुआ। दो चारपाइयों पर मैले बिस्तर—एक मेज़ पर बहुत-सी पुस्तकें—सिगरेटों का डिब्बा, कलमदान, और कुछ नगदी। एक चारपाई पर श्यामसुन्दर बाल बिखेरे, शोक में डूबा हुआ है, और सिगरेट के कश लगाकर धूएँ के चक्कर हवा में छोड़ रहा है। अचानक दरवाज़े से भैयालाल प्रवेश करता है—लम्बा, दुबला-पतला जवान है—गाल अन्दर को पिचके हुए, चेहरा पीला—एम० ए० पास।]

भैयालाल (चारपाई पर बैठकर)—आज वह बदला लिया कि उम्र-भर याद रखेगी। यह ऊँचे वर्ग के लोग न जाने क्यों हमें कीड़े मकौड़ों से भी तुच्छ समझते हैं।

श्यामसुन्दर (एक उदास मुस्कान से)—क्या बात हुई, किससे बदला लिया? वह भाग्यहीन कौन है?

भैयालाल—वही तो है, डाक्टर घनश्यामलाल की पत्नी, जमना। ओह! परन्तु तुम उसे नहीं जानते। मोटी, सावली-सी है—दो बच्चे हो जाने पर भी एफ० ए० में पढ़ती है। मैं तीन महीने से उसे इतिहास पढ़ा रहा हूँ। समझ मे नहीं आता कि स्त्रियों को इतिहास की क्या जरूरत है। इन्हें तो चूल्हा चाहिए। खैर, हमें तो अपने पैसों से काम है। दो घंटे पढ़ाता हूँ, पन्द्रह रुपये मिलते हैं।

श्यामसुन्दर—आजकल यही बहुत है।

भैयालाल (बनावटी आहें भरकर)—ठीक है, मगर ... 'मेरा रंग-रूप' ... मैं इसी विषय पर तुमसे परामर्श करने आया था कि...

श्यामसुन्दर (बात काटकर)—मगर तुमसे किस मसखरे ने कह दिया कि मैं 'रूप का डाक्टर' हूँ?

भैयालाल (बात अनसुनी करके)—ओह! मैं अपनी सूरत को क्या कहूँ, मेरा रंग जन्म ही से पीला है, जिससे हर मनुष्य को सदेह होता है कि मुझे क्षय रोग लगा हुआ है। अब बताओ मैं क्या करूँ? जिस दिन 'हिन्दुस्तान टाइम्स'में विज्ञापन देखा, उसी दिन अर्ज़ी लिखकर डाक्टर घनश्यामलाल के पास चला गया। वह तो घर पर नहीं था, परन्तु पढ़ना तो उसकी पत्नी को था। मुझे देखते ही घबरा गई। कहने लगी—'आप कुछ बीमार तो नहीं रहे?" और यह उसने कुछ ऐसी सहानुभूति के लहजे में पूछा कि मुझसे इन्कार न हो सका, झूठ-मूठ कह दिया, "हाँ, श्रीमती जी!" यह सुनकर वह कुछ घबरा-सी गई—रुकते-रुकते बोली—"ओह ... आप ... आपको क्या बीमारी थी?" मैंने एक डग उसकी ओर भरी और कहा—"टाईफाइड!" यह सुनकर वह दो कदम पीछे हट गई—कहने लगी—"टाईफाइड!" मानो उसे अब भी विश्वास नहीं होता था कि मुझ जैसे भोले-भाले आदमी को भी टाईफाईड हो सकता है। मैंने सोचा, बेचारी बहुत सहृदय और दयालु मालूम होती है, आओ लगे हाथों इसका लाभ उठा लें। सो, मैंने और भी दीन बनकर कहा—"हाँ, श्रीमती जी, टायफाइड, पिछले चार महीने से बिस्तर पर पड़ा रहा हूँ, अब कहीं जाकर आराम हुआ है। आपका विज्ञापन पढ़ा कि आपको ... अध्यापक की

आवश्यकता है, जो हर रोज दो घटे इतिहास पढा सके, इसी-लिए उपस्थित हुआ हूँ। फीस ठहरा लीजिए—यह रहे सर्टिफिकेट। अब योग्यता का प्रश्न बाकी रहा, तो इसके लिए मेरा केवल यही कह देना " परन्तु वह जल्दी ही बीच में बोल उटी—"नहीं, नहीं"—उसने चिन्ता-भरी दृष्टि से मुझे देखते हुए कहा, "इतनी जल्दी क्या पड़ी है? आपको कम-से-कम दो-तीन सप्ताह विश्राम करना चाहिए। आप .... आप दो तीन सप्ताह के बाद अवश्य पधारें।"

ऐ खयाले यार, क्या करना था और क्या कर दिया!
मैंने अपने आपको बहुत-बहुत कोसा, परन्तु अब लकीर पीटने से क्या होता था? लाचार, वापिस चला आया, और फिर दूसरे दिन डाक्टर घनश्यामलाल के एक जिगरी दोस्त से सिफारिश करवाई।

"परन्तु वह तो रोगी मालूम पड़ता था"—डाक्टर की पत्नी ने सिफारिश के जवाब में कहा—"उसने मुझे खुद बताया कि उसे टाईफाइड था।"
मेरी सिफारिश करने वाले ने हँसकर कहा, "मैंने तो उसे आज तक कभी बीमार ही नहीं देखा, उस बेचारे की सूरत ही ऐसी है—मैं टीक कहता हूँ—मैं उसे मुद्दत से जानता हूँ—

तो अब तीन महीने से उसे पढ़ा रहा हूँ, बिलकुल मन्द-बुद्धि है। दिल में मुद्दत से कसक थी कि उससे बदला लूँ, सो आज अवसर मिल गया।

श्यामसुन्दर—क्या हुआ?

भैयालाल—(जैसे उसने सवाल को सुना ही नहीं) यों तो इसमें मुझे भी कोई शक नहीं कि सूरत से मैं क्षय (दिक) का रोगी

दिखाई देता हूँ, परन्तु क्या तुमने वह अंग्रेजी कहावत नहीं सुनी कि 'सूरतें बहुधा धोखा देती हैं?' मुझे अच्छी तरह याद है कि जब मैं पाँचवीं कक्षा में पढ़ता था, उस समय भी ऐसा ही दुबला-पतला था, और कक्षा में हर विषय में प्रथम रहा करता था। अतः मैं अपने स्वभाव के अनुसार पाँचवीं कक्षा में भी प्रथम ही रहा। जब वार्षिक-उत्सव में इनाम बाँटे जाने लगे, तो मुझे बहुत से इनाम मिले। उन दिनों मेरी कक्षा में एक लड़का बिशनदास था, बहुत सुन्दर, मनोहर, हृष्ट-पुष्ट--उस अभागे का कण्ठ बड़ा सुरीला था, उसे भी संगीत में प्रथम रहने पर पदक मिला। मुझे याद है वह मुझे 'तपदिकी' कहा करता था। उस दिन उत्सव में उसकी सुन्दर बहनें भी आई हुई थीं, और मेरी दुबली-पतली बहनें भी—और जब मैं बहुत-से इनाम समेटकर ले गया तो बिशनदास की बहनों ने मेरी बहनों को ऊँची आवाज़ में सुनाकर कहा—"हाय, बेचारा भैयालाल, ये सब इनाम इसके किस काम के, जबकि इसे तपेदिक है!" मुझे याद है मेरी बहनों ने बहुत बुरा माना था। परन्तु देखो भाग्य की लीला—मैं तो अभी तक जीवित हूँ पर बेचारा सुन्दर तथा हृष्ट-पुष्ट बिशनदास दो साल हुए, तपेदिक से बीमार होकर चल बसा! ओह! सूरतें कितना धोखा देती हैं! वह बहुत अच्छा आदमी था, और जब कभी मैं अपने गाँव जाता था तो वह सदैव मुझसे मेरे स्वास्थ्य, मेरी खाँसी, मेरी जठराग्नि के सम्बन्ध में प्रश्न किया करता था—और यह प्रश्न तो मुझे देखकर हर उल्लू का पट्ठा [illegible] दम जड़ देता है। यदि मैं किसी डाक्टर के पास चला जाऊँ और उससे कहूँ कि मुझे हल्की-सी खाँसी है, तो वह मेरी सूरत देखकर तुरन्त कह उठता है—

"आपको रात को पसीना तो नहीं आता ?"

"नहीं. महाशय, परन्तु दिन को अवश्य आता है, विशेषकर जब कि मैं व्यायाम करता हूँ।"

"क्या आपको खासी के साथ खून भी आता है ?"

"नहीं जी, खून तो नहीं आता, परन्तु खखार अवश्य निकलती है।"

"और—बुखार ?"

"अभी तक तो नहीं—परन्तु यदि आपके प्रश्नों की भरमार ऐसी ही रही तो बहुत सम्भव है कि शीघ्र ही · "

और इस पर डाक्टर भड़क उठता है—'आप कमरे से बाहर चले जाइए।'—बस, जिस डॉक्टर के पास जाता हूँ लगभग यही होता है। अब मेरा विचार है कि डॉक्टर यार मोहम्मद से अपनी छाती और फेफड़ों का एक्स-रे फोटो खिंचवाकर हमेशा अपने पास रखूँ, ताकि जब कोई नया डॉक्टर या पुराना हकीम पूछे—"आपको पसीना तो नहीं आता ? खून निकलता है ? बुखार कब से है ?"—तो झट यही एक्स-रे फोटो उसके हाथ में दे दूँ और कहूँ—"भलेमानस, कल मैंने जरा अचार अधिक खा लिया था इसलिए केवल खासी की दवा चाहिए।"

श्यामसुन्दर—बहुत उत्तम विचार है !

भैयालाल—बेचारे डॉक्टर लोग तो अलग रहे, स्वय मेरे गुरु—क्या कहूँ—बहुत दिनों की बात है, मैं उन दिनों नए-नए व्यायाम सीख रहा था, चाहता था कि अपने दुबले-पतले शरीर को मोटा बना लूँ और चेहरे की पीली-पीली रगत को गुलाब जैसा लाल बना लूँ। सो मैं खूब दड पेलता था और दूध पीता था। तीन-चार महीने यही दशा रही इसके पश्चात् हमारा भगोल का टीचर जो साढे तीन महीने की छुट्टी लेकर

अपनी सुपुत्री का विवाह करने अपने गांव गया हुआ था, वापिस आ गया और मुझे प्ले-ग्राउण्ड के पास मिला। मुझे देखते ही कहने लगा—ओह! तुम तो बहुत दुर्बल हो गए हो। क्या बीमार हो गए थे?

मैंने मन में कहा—बीमार तो नहीं रहा, परन्तु व्यायाम अवश्य करता रहा हूं। उस दिन से लेकर आज तक मैंने फिर कभी व्यायाम नहीं किया। भला व्यायाम का लाभ ही क्या है, जब इससे दूसरे लोगों के मन में भ्रम उत्पन्न हो? और फिर बिना बात अपने शरीर को कष्ट देना कौनसी बुद्धिमानी है?

श्यामसुन्दर—नहीं, आप व्यायाम से अपने शरीर को स्वस्थ बना सकते हैं। व्यायाम से शरीर में स्फूर्ति आती है, बल आता है।

भैयालाल—मुझे बताते हो, श्यामसुन्दर? तीसरी कक्षा का पाठ दुहरा रहे हो? उसमें तो और भी कई निकम्मी और झूठी बातें लिखीं थीं—जैसे, व्यायाम बहुत लाभदायक होता है, झूठ बोलना पाप है, ईमानदारी बड़ी नियामत है, दूसरे की चीज पर नज़र न डालो—सब बकवास, सफेद झूठ!

श्यामसुन्दर—तुम तो डाक्टर घनश्यामदास की पत्नी का उल्लेख कर रहे थे जिसे तुम पढाते रहे हो।

भैयालाल—हां, मैं जमना का जिक्र कर रहा था, परन्तु तुमने कभी सोचा कि मेरी बदसूरती में मेरा कितना दोष है—मेरे माँ-बाप भी ऐसे ही थे। दोष तो उनका है कि अपनी बदसूरती को जानते हुए भी मुझे जन्म दिया।

श्यामसुन्दर—यह तो केवल सौभाग्य से हो गया था।

भैयालाल—मुझे तो इसमें तनिक भी 'सौभाग्य' प्रतीत नहीं होता और यों देखा जाय तो इसमे आपत्ति ही क्या है, ज़रा विचार

तो करो प्रकृति ने दो कान, आंखें, हाथ, पांव, नाक और होठों के समूह से मनुष्य के कितने भिन्न-भिन्न नमूने बनाए हैं कि एक की शक्ल दूसरे से नहीं मिलती, और दुनिया वालों को देखो कि प्रकृति की लीला और कला की प्रशंसा करने की बजाय मुझे देख-देखकर हँसते हैं। कितनी मूर्खता है! आज मनुष्यों में कोई बड़े-से-बड़ा कलाकार प्रकृति की इस आश्चर्य-जनक बहुरूपता का एक नमूना भी पैदा कर दे तो मैं जानूँ!

श्यामसुन्दर—बेशक, बेशक, परन्तु वह डॉक्टर की पत्नी—!

भैयालाल—अरे भाई, अब उसकी पत्नी की कौन-सी बात बतानी रह गई? मैं उसे तीन महीने से पढ़ा रहा हूँ, और तीन महीनों में वह कोई पन्द्रह बार बीमार पड़ी होगी, और कोई दस बार उसके पति डाक्टर महोदय को मौसमी बुखार हुआ है—कभी देखो तो सिर में दर्द है, कभी पेट में, कभी बुखार, कभी जकाम, और मुझे देखो कि इन तीन महीनों में एक छींक भी नहीं आई। आज मैं जब पढ़ाने के लिए गया तो कल की तरह फिर कहने लगी—"मुझे ज़काम हो गया है।" मैंने कहा—"आपका स्वास्थ्य भी विचित्र है, आप डाक्टर लोग जब परहेज़ नहीं करेंगे तो और कौन करेगा? मुझे देखिए अपने स्वास्थ्य का खयाल रखता हूँ—कभी कोई तकलीफ नहीं होने पाई!"

श्यामसुन्दर—खूब बदला लिया!

(अज़हर कमरे में प्रवेश करता है—मंझला कद—दुहरे बदन का जवान है—एक नीला सूट पहन रखा है—हाथ में एक तार है।)

अज़हर—हैलो श्याम! हैलो तपेदिक!

श्यामसुन्दर, भैयालाल—हैलो अज़हर! यह तार कैसा है?

अजहर—अमजद ने भेजा है। लिखा है कि 'बी० टी०' की डिग्री मिल गई है, और अब वह इलाहाबाद जा रहा है, जहाँ कमेटी के स्कूल में उसे पैंतीस रुपये की नौकरी मिल गई है।

श्यामसुन्दर—मगर एम० ए० बी० टी, और केवल पैंतीस रुपये !

अजहर—मैं उसे बधाई का पत्र लिख रहा हूँ। भाई, इस महाजनी युग में तुम इससे अधिक और किस चीज की आशा कर सकते हो।

भैयालाल—कल मुझे कैलाशनाथ मिला था, वह जो बी० ए० में हमारे साथ पढता था और फेल हो गया था। अब अपने बाप के कारखाने में मैनेजर हो गया है। अपनी मोटर-कार में बैठा हुआ था। मेरी ओर दयापूर्ण देखकर कहने लगा— "आजकल क्या करते हो ?"—और यह वही व्यक्ति है जो अंग्रेजी का लेख मुझसे खुशामदें करके ठीक कराया करता था !

श्यामसुन्दर (उदास होकर)—जाने दो इन बातों को। मुझे तो मसूद की चिन्ता हो रही है। तुम जानते हो बेचारा दो महीने से मेरे पास रहता है मगर अभी तक नौकरी कहीं नहीं मिली। कल से वापस नहीं आया।

अजहर—वापस गाँव को चला गया होगा।

श्यामसुन्दर (रुकते हुए)—शायद, मगर उसका ट्रंक और बिस्तर तो यहीं है।

भैयालाल—कोई आवश्यक काम होगा—(आशाजनक स्वर से)—शायद कोई नौकरी मिल गई हो और आज तुम्हें पता देने के लिए आ जाय।

श्यामसुन्दर (रुकते हुए)—शायद !

अजहर (सिर हिलाते हुए)—कितनी बेकारी है ! और कितनी

जहालत ! कल मैं मोती-हाल में प्रोफेसर रोचानन्द का भाषण सुनने गया—प्रोफेसर साहब एक रूई के कारखाने में ३०० शेयरों के मालिक हैं—बड़े आवेश मे आकर ग्रेजुएटों को झाड़ बता रहे थे और अपने अनुभवो के प्रकाश में उन्हें कुछ रचनात्मक सुझाव दे रहे थे– कह रहे थे कि आजकल की यह बेकारी आर्थिक कारण से नहीं है। इसका मूल कारण यह है कि आज का शिक्षित वर्ग परिश्रम से जी चुराता है। उनकी यह दुर्दशा उनकी आराम-पसन्दी का परिणाम है। चुनान्चे उन्होंने कई रचनात्मक सुझाव पेश किये—जैसे कि ग्रेजुएट छोटे मोटे काम-धन्धे हाथ मे लें। बूट पालिश करना, दुकानदारों से जूते उधार लेकर उन्हें गली-गली फिरकर बेचना, घी की दुकान खोलना, मूँगफली बेचना।

श्यामसुन्दर (कटु स्वर से)—चना जोर गर्म !

भैयालाल—बेकारी दूर करने के कई ऐसे गुर मुझे भी याद हैं।

अज़हर—हम भी तो सुने।

भैयालाल—(वास्कट की जेब से हाथ निकालते हुए) उदाहरणतया तुम और श्यामसुन्दर अँग्रेजी मे अच्छा लिख सकते हो, एक पत्रिका निकाल लो।

अजहर, श्यामसुन्दर—परन्तु रुपया ?

भैयालाल—अच्छा, कुछ और सही, एक बढ़िया-सा होस्टल खोल लो, सुन्दर कमरे, स्वादिष्ट भोजन, थोड़ा किराया, उचित दर।

अजहर, श्यामसुन्दर—परन्तु रुपया ?

भैयालाल—(हँसकर और वास्कट को जेब से हाथ निकालते हुए) अच्छा यह भी न सही, लो अब मैं तुम्हें ऐसा गुर बताता हूँ जो कभी विफल नहीं हो सकता।

श्यामसुन्दर—वह क्या है ?

भैयालाल—औरत !

श्यामसुन्दर—औरत ?

भैयालाल—हाँ, हाँ, औरत। एक ऐसी औरत चुन लो जो बहुत ही मूर्ख हो और किसी बड़े धनवान की इकलौती बेटी हो।

श्यामसुन्दर—फिर ?

भैयालाल—फिर उससे शादी कर लो।

अजहर—भई क्या खूब ! तुम तो इतिहास के पूर्ण पण्डित ही नहीं हो बल्कि बुद्धिमान भी हो।

श्यामसुन्दर—(दोनों आँखें मींचकर) हुँ—हुँ।

अजहर, भैयालाल—हुँ, हुँ का क्या मतलब ?

श्यामसुन्दर—(आँखें बन्द किये हुए) एक ऐसी औरत बिलकुल मेरी निगाह में है।

भैयालाल—(उत्सुकता से) क्या वह एक धनी व्यक्ति की बेटी है ?

श्यामसुन्दर—(सिर हिलाकर) हाँ तो—

भैयालाल—और—और—इकलौती बेटी ?

श्यामसुन्दर—हाँ इकलौती बेटी—बिलकुल इकलौती।

भैयालाल—अरे यार, बताओ उसकी शक्ल कैसी है ? बड़ी सुन्दर होगी ?

श्यामसुन्दर—वह बहुत ही सुन्दर है, ऐसी सुन्दर जैसे चन्द्रकिरण—ऐसी कोमल जैसे कमल की पत्ती—ऐसी लजीली जैसे लाजवन्ती की डाली—बस कामिनी का रूप है ! मैं उससे प्रेम करता हूँ और वह मुझसे प्रेम करती है, और उसका धनवान पिता अपनी सारी धन-सम्पत्ति मुझे दहेज में देना चाहता है।

भैयालाल—(बड़ी उत्सुकता और ईर्ष्या के भाव से) अरे, बताओ वह कौन है ? कहाँ रहती है ? उसका नाम क्या है ?

श्यामसुन्दर—(अकस्मात् आंखें खोलकर) ओह ! वह किधर चली गई ? वह कौन थी ? उसका क्या नाम था ?

[श्यामसुन्दर, अजहर, भैयालाल तीनो एकदम ठहाका मार कर हँसते हैं और एक-दो मिनट तक हँसते रहते हैं।]

[एक पुलिस का सिपाही वर्दी पहने हुए आता है]

सिपाही—आपमे से श्यामसुन्दर कौन है ?

[श्यामसुन्दर उठकर खड़ा हो जाता है।]

सिपाही—(एक लिफाफा आगे बढ़ाते हुए) सिविल हस्पताल में जाकर एक लाश की पहचान कर लो, वह रेलगाड़ी के नीचे आकर मर गया है। उसकी जेब से आपका पता निकला है।

श्यामसुन्दर—मसूद ! हाय !! (अपने हाथों से मुँह को छिपा लेता है।)

[परदा]

हजामत

नाटक के पात्र

थानेदार

मुलज़िम

डोगरसिंह

कुछ सिपाही, कर्मचारी आदि

वर्तमान काल

समय दोपहर के १२

हजामत

पहला दृश्य

[थाने में सब-इन्स्पेक्टर पुलिस का कमरा। स्टेज के बाईं ओर एक बड़ी मेज जिस पर टेलीफोन रखा है। केन्द्र में दीवार पर शहर का नक्शा लटक रहा है। केन्द्र से दाहिनी ओर एक खिड़की है जिसमें लोहे की मजबूत सलाखें लगी हुई हैं इससे परे एक दरवाजा। पुलिस-अफसर कुर्सी पर बैठा अपने नाखून काट रहा है, थोड़ी देर के बाद टेलीफोन की घण्टी बजती है।]

थानेदार—(रिसीवर उठाते हुए) कौन? क्या? हाँ—हाँ—मैं नहीं सुन सकता हूँ—तुम्हारी आवाज—हाँ—हाँ—मैं जानता हूँ—तुम मुझसे टेलीफोन पर बात कर रहे हो। क्या कहा? कत्ल कर दिया? दो आदमी? नहीं, नहीं—हाँ, हाँ—अच्छा—वह आदमी—वह आदमी कौन है? क्या कहा? घायल आदमी भाग गया। कुछ समझ में नहीं आता—क्या कह रहे हो। वह घायल आदमी किधर भाग गया?

[डोगरसिंह सिपाही एक मोटे से बनिए को भुजा से पकड़े हुए अन्दर आता है।]

डोगरसिंह—(सैल्यूट करता है) हुजूर, मैं यह मुलज़िम—

थानेदार—(रिसीवर पर हाथ रखकर) देखते नहीं—मैं टेलीफोन पर बात कर रहा हूँ—बदतमीज़—खामोश खड़े रहो, और मुलजिम

को भी उस कोने मे ले जाओ। (टेलीफोन में) हां—अच्छा—तुम क्या कह रहे हो ? मुलजिम पकड़ा गया ? क्या कहा—मरने वाला भाग गया—मारने वाला पकड़ा गया !—क्या बकवास है ? मेजर हयात ? मैंने कब कहा—मेजर हयात ? कुछ समझ में नहीं आता। देखो अब्दुलरहमान, अगर तुम क़त्ल की रिपोर्ट करना चाहते हो तो सीधी तरह बात करो—यह नाक म सारंगी की तरह क्यों गुनगुना रहे हो ? क्या कहा, गाना ! कौन गाना सुनना चाहता है, इस समय ? मैं कहता हूं परमात्मा के लिए, सुनते हो, नाक में सारंगी की तरह मत गुनगुनाओ। सुनते हो ? ओ—हो, हो (घंटी बजती है, थानेदार रिसीवर पर हाथ रख देता है।) ओ—डैम (डोगरसिंह की ओर मुड़ते हुए) अच्छा, डोगरसिंह, यह किसे ले आए तुम ?

डोगरसिंह—हुजूर, आज्ञा हो तो निवेदन करूँ। मैं ड्यूटी पर था—यह आदमी सड़क के बीच मे खड़ा होकर शोर मचाने लगा—सैकड़ों लोग इकट्ठे हो गए—तांगे, मोटरें, छकड़े सब रुक गए—सब ट्रैफिक बन्द हो गया। हुजूर, यह सड़क के बीचमे खड़ा होकर शोर मचाने लगा—कहने लगा कि मैं एक कुँजड़ा हूँ—मेरा नाम दूला है—मैंने एक आदमी को जान से मार डाला है—मैं हत्यारा हूँ इसलिए, हुजूर, मैं इसे आपके पास ले आया हूँ।

थानेदार—(हँसते हुए) कोई बेचारा शराबी है क्यों बेटा, दूले—हा-हा-हा—

डोगरसिंह—नहीं हुजूर, शराबी तो बिलकुल नहीं। बस, बात इतनी हुई कि यह सड़क के बीच में जहाँ मैं खड़ा ड्यूटी दे रहा था, आकर चिल्लाने लगा—"लोगो, मैं खूनी हूँ—हत्यारा हूँ—

मैंने एक मनुष्य की हत्या की है। सब मनुष्य भाई-भाई हैं—मैंने एक भाई की हत्या की है।" हुजूर, अब मैं इसे आपके हुजूर में पेश करता हूँ।

थानेदार—तुमने मुझे पहले क्यों न बताया? अच्छा, यह बात है। डोगरसिंह, मुलज़िम को गरदन से क्यों पकड़े हुए हो, छोड़ दो, इस बेचारे को—भागकर कहाँ जायगा? क्यों बे दूले, क्या बात है? कौन हो तुम?

दूला—हुजूर, मैं एक कुँजड़ा हूँ—मैं पापी हूँ (दोनों घुटने टेककर रोनी आवाज़ से) हुजूर, मैं हत्यारा हूँ-मैं खूनी हूँ—मैंने खून किया है—मुझे जेल में डाल दो!

थानेदार—(कड़ककर) हुं! (नथुने फुलाते हुए) तुम खूनी हो—बदमाश!

दूला—मैं बदमाश नहीं हूँ-हुजूर, मैं खूनी हूँ। हुजूर, मैं कुँजड़ा हूँ। मैंने एक मनुष्य की हत्या की है। सब मनुष्य भाई-भाई हैं-हाय! हुजूर, मैं अपने पापों का प्रायश्चित करना चाहता हूँ-जिसकी हत्या की है उसके खून के धब्बों को अपने खून से धो देना चाहता हूँ।

डोगरसिंह—बस, हुजूर, सड़क के बीच खड़ा होकर इसी तरह चिल्लाए जाता था कि मैंने इसकी गरदन नापी, और—

थानेदार—बको मत "(दूला से) अच्छा, दूले खड़े हो जाओ। सीधे खड़े हो जाओ। मेरी ओर देखो। मुझसे बिल्कुल कोई बात न छिपाना—नहीं तो तुम्हारे हक में अच्छा न होगा। अब बताओ, तुमने किसका खून किया है?

दूला—एक आदमी का—हुजूर! सब आदमी भाई-भाई हैं—मैंने अपने भाई का खून किया है, मैं हत्यारा हूँ। मैं अब इसे सहन नहीं कर सकता-मेरी अन्तरात्मा मेरी गरदन उड़ा देना

चाहती है। आह! भाई, मैंने पाप किया है—मुझे दण्ड दो—मुझे शिकंजे में कस डालो—मुझे रस्सों से बाँध दो—मेरी मेरी हजामत कर डालो।

थानेदार—हजामत! क्या बकते हो तुम?

दूला—हाँ हुजूर, हजामत! मैंने सुना है हुजूर, कि जेल में ले जाने से पहले हर एक कैदी के सिर की हजामत की जाती है (रोकर) हुजूर, मेरे सिर की हजामत कर दीजिए।

थानेदार—क्या बकते हो! सीधे खड़े हो जाओ। मेरी ओर देखो—मेरे प्रश्नों का ठीक-ठीक उत्तर दो।

डोगरसिंह—(बात काटते हुए) हुजूर, बस, यह इसी तरह सड़क के बीच में खड़ा चिल्ला

थानेदार—(कड़क कर) बको मत! तुम्हारा नाम क्या है? (फर्श पर पड़े हुए एक ट्रङ्क को ठोकर लगाकर) क्या यह ट्रंक तुम्हारा है?

दूला—कौनसा ट्रक हुजूर? मैं ट्रक नहीं बेचता। हुजूर, मैं तो साग-भाजी बेचता हूँ। मै प्याज, शलजम, गोभी, पालक बेचता हूँ। हुजूर, प्याज ढाई आने सेर, गोभी एक आने का एक फुल, शलजम दो पैसे सेर। बाजार के भाव से, हुजूर, बहुत सस्ते बेचता हूँ। कभी मेरी दुकान पर आइये, हुजूर। बाजार के नुक्कड़ पर दुकान है—धनिया अदरक मुफ्त, पालक सवा दो आने।

थानेदार—चुप, चुप! अच्छा, बताओ यह ट्रंक किसका है? अगर यह तुम्हारा नहीं, तो यह ट्रक यहाँ कैसे आया? एँ (समझाने के ढग से) तो मेरे दोस्त, मने उसे मारकर या गला घोंट कर किसी ट्रंक आदि में छिपा दिया होगा न? एँ, तो फिर हम भी तो कुछ पता चले दोस्त?

दूला—मैं किसी का दोस्त नहीं, मैं मनुष्यमात्र का शत्रु हूँ। मैंने एक मनुष्य की हत्या की है—सब मनुष्य भाई-भाई हैं, मुझे हिरासत में ले लो, मेरे शरीर के टुकड़े कर डालो, मुझे मेरे पाप की सजा दो, परमात्मा के लिए मुझे सज़ा दो।

डोगरसिंह—हुजूर, यह ट्रंक हमारा अपना है, इसमें बहुत सी फाइलें बन्द हैं, कत्ल के नए केस जिनकी अभी जाँच हो रही है।

थानेदार—हमारे पास कितने ट्रंक थे ?

डोगरसिंह—हुजूर, चार।

थानेदार—अच्छी तरह गिन लो।

डोगरसिंह—एक, दो, तीन, चार, यह हुजूर चौथा ट्रंक है।

थानेदार—तो—तो फिर—यह मुलजिम कहाँ से आया ?

डोगरसिंह—हुजूर, यह सड़क के ठीक बीच में आकर जब मैं ड्यूटी पर खड़ा था जोर-जोर से चिल्लाने लगा।

थानेदार (भड़ककर)—बको मत—मैं यह पहले भी सुन चुका हूँ। मगर अब, दूले, यह बताओ कि वह शव कहाँ है मेरा मतलब है कि वह मुर्दा—वह लाश कहाँ है ?

दूला—लाश ? वह तो मेरा ख्याल है—कभी की सड़ चुकी। हाय ! वह मेरा भाई था—सब मनुष्य भाई भाई हैं।

थानेदार—देखो, सीधी तरह बात करो, नहीं तो मैं हंटरों से पीठ की खाल उधेड़ दूंगा।

दूला—सीधी तरह तो कह रहा हूँ कि मैंने एक आदमी का खून किया। खून करने के बाद मैंने सोचा कि अब आराम से रहूँगा और इस पाप को सदा के लिए भूल जाऊँगा। लेकिन—नहीं—मेरी अन्तरात्मा मुझे दिन-रात धिक्कारती रही—मुझे एक एक क्षण भी सुख चैन नहीं मिला—मेरा जीवन एक अभिशाप बन गया। मेरा विचार था कि मैं इसे भूल जाऊँगा—परन्तु,

नहीं, रात को भी कई बार जब मैं दूकान पर सोता तो मुझे यही विचार सताता था, और मैं भयभीत होकर चारों ओर दृष्टि दौड़ाता तो क्या देखता कि ··

थानेदार (बात काटकर)—हाँ, तो तुम क्या देखते ?

दूला—मैं गाजर, मूलियाँ, गोभी, पालक · अरे हुजूर, मैं कुँजड़ा हूँ न।

थानेदार (फर्श पर पाव पटक कर)--सीधी तरह बात करो नहीं तो—

दूला—लेकिन इससे अधिक सीधी बात क्या हो सकती है कि मैंने एक आदमी का खून किया। मैं हर रोज़ रात को अपने बिस्तर पर लेटकर रोता हूँ और मेरी पत्नी मुझे रोते हुए देखकर कहती है—"दूलेशाह, इस तरह रोने-धोने से मन का भार हल्का नहीं हो सकता और फिर, तुम हर रात तकिया और बिस्तर की चादर और रज़ाई गीली कर देते हो। तुम—तुम क्यों नहीं अपने-आपको पुलिस के हवाले कर देते ? अब तुम बूढे हो गए हो—यह सन्ताप अब तुमसे नहीं सहा जायगा। जाओ, अपने-आपको पुलिस के हवाले कर दो। सरकार तुम्हें कालेपानी भेज देगी, और हम यहाँ तुम्हारे लिए प्रार्थना करेंगे।" यह कहकर वह रोने लगी—फिर मैं भी रोने लगा—फिर हम सब मिलकर रोने लगे और कुछ निर्णय न कर सके। अन्त में एक दिन मेरी पत्नी ने मुझे एक नई कमीज़ पहनाई, मेरे सफेद बालों में कघी की, अपने हाथ से ही मुझे परांठे खिलाए और फिर मुझे आप ही बाजार के चौक तक छोड़ गई—परन्तु उस दिन भी मेरा साहस नहीं हुआ—और मैं वापस चला गया।

थानेदार—मैं पूछता हूँ, भलेमानस, यह घटना कब हुई थी ? वह

कौन था ? यह सब-कुछ कैसे हुआ ?

दूला—अब तो मुझे अच्छी तरह याद नहीं—बीस-बाईस बरस से अधिक ही हुए होंगे।

थानेदार—तो फिर तुम यहाँ क्यों आए हो ? क्या तुम नहीं देखते कि ये चार ट्रंक कत्ल के मुकद्दमों की फाइलों से भरे पड़े हैं ? मैं इतना निठल्ला नहीं हूँ कि बीस-बाईस बरस के पुराने और गड़े मुर्दों को उखाड़ता फिरूँ। डोगरसिंह, इसे बाहर निकाल दो। देखो, मियाँ दूलेशाह, इस बकवास को बन्द करो, और जाओ चुपचाप दुकान पर साग-भाजी बेचो।

दूला—मैं साग-भाजी बेचना नहीं चाहता, मैं कालेपानी जाना चाहता हूँ। मेरा बदन फुक रहा है—मेरे दिल में आग-सी लगी हुई है—मुझे कोड़ों से मारो—मुझे रस्सों से जकड़ डालो—मुझे जेल में डाल दो—मेरे सिर की हजामत कर दो। परमात्मा के लिए मुझे वापिस मेरी पत्नी के पास मत भेजो।

थानेदार—उठो, उठो, मेरे पाँव में मत पड़ो। यहाँ से तुरन्त नौ-दो ग्यारह हो जाओ। बाईस साल का पुराना केस ! हुँ !

दूला—मैं खूनी हूँ !

थानेदार—अपने घर जाओ—मैं क्या कर सकता हूँ !

दूला—मैं नहीं जाऊँगा—मैं जेल जाना चाहता हूँ—मुझे हिरासत में ले लो—मुझे रस्सों से जकड़ दो—मेरी हजामत कर डालो।

डोगरसिंह—बस, हुजूर, यह इसी तरह सड़क के बीच •

थानेदार—हाँ • हाँ, मैं इसे सड़क के बीच में खड़ा होकर चिल्लाने का मज़ा चखाऊँगा। मैं इसकी ऐसी गत बनाऊँगा कि हमेशा याद रखेगा। मैं····

दूला—तुम्हारी हिम्मत ही नहीं हो सकती कि तुम ऐसा करो। मुझे हिरासत में ले लो नहीं तो मैं तुम्हारी शिकायत करूँगा। तुम

मेरे साथ कानून के विरुद्ध बर्ताव नहीं कर सकते। मैं अपनी पत्नी और बच्चों से अन्तिम बार मिल कर आया हूँ। मेरी हजामत कर डालो नहीं तो मैं तुम्हारी शिकायत कर दूंगा। क्या तुम नहीं समझते कि मेरी अन्तरात्मा मुझे कितना धिक्कार रही है?

थानेदार—धिक्कार? सुना? डोगरसिंह तुमने, सुना? हम इन लोगों को मुद्दत से ढूँढ रहे हैं। यह देखो चार ट्रक नए मुकद्दमों से भरे पड़े हैं। इस काम पर स्पेशल स्टाफ लगाया गया है—फिर भी कुछ पता नहीं चलता। इतने वर्ष तो यह बदमाश छिपा रहा है और इसकी अन्तरात्मा ने इसे एक बार भी नहीं धिक्कारा—अब अचानक यह सड़क के बीच में खड़ा होकर चिल्लाने लगता है—"हाय मेरी अन्तरात्मा! मुझे बांध लो।" यहाँ हम नए मुकद्दमों की छान-बीन करते करते पागल हुए जा रहे हैं—और अब यह कमबख्त, बाईस वर्ष के पुराने मुर्दे उखाड़ना चाहता है। दफा हो यहाँ से—बदमाश कहीं का। कालापानी तेरे जैसे बदमाशों के लिए नहीं है।

दूला—मैं कालेपानी जाना चाहता हूँ। मेरी अन्तरात्मा मुझे धिक्कार रही है। मेरा जीवन मेरे लिए दूभर हो गया है। परमात्मा के लिए मुझे अपनी जेल में थोड़ा-सा स्थान दे दो। मेरे भाई, मैं स्वीकार करता हूँ कि मैंने एक मनुष्य की हत्या की है। ईश्वर के लिए मुझ पर दया करो—मुझे कैद कर लो—मेरी पीठ पर कोड़े लगाओ—मेरे सिर की हजामत कर डालो।

थानेदार—क्या बकते हो तुम? क्या तुमने मुझे कोई नाई समझ रखा है? डोगरसिंह, रहीम खां, ताराचन्द, बसाखासिंह, निकालो इस हरामज़ादे को।

दूला—मैं नहीं जाऊँगा। तुम्हें कैद करना होगा—मेरे हाथों में हथ-

कड़ियाँ डालनी होंगी—मेरे सिर की हजामत करनी होगी।

थानेदार—निकालो—निकालो - इसे बाहर।

[सीढ़ियो पर पैरो की आहट—तीन-चार आदमी भीतर प्रवेश करते हैं।]

एक आदमी—वह रहा—पागल! पागल! पकड़ो इसे। (थानेदार से) हुजूर, वह पागल पागलखाने से कई दिनों से भागा हुआ था—हमे पता चला कि इधर ··

डोगरसिंह—जी, हाँ, हुजूर मैंने इसे पकड़ लिया। बात यह हुई कि मै दूसरी ड्यूटी पर था, और यह मेरे पास आकर सड़क के बीच मे खड़ा होकर चिल्लाने लगा

थानेदार—बको मत!

[परदा]

दरवाज़ा

नाटक के पात्र

मां

कान्ता

शान्ता

मकान-मालिक

अजनबी

दरवाज़ा

[खिड़की ज़ोर से खुलती है, बादलों की गरज और हवा के साथ वर्षा की आवाज़ कमरे के अन्दर सुनाई पड़ती है।]

माँ—अब तो वर्षा भी होने लगी, बेटी ! (अन्तर) और यह हवा का तूफ़ान—(अन्तर) अब कौन आयगा इस तूफ़ान के अन्धयारे में। (अन्तर) कान्ता बेटी, अब क्या समय होगा ?

कान्ता—मुझे नहीं मालूम।

माँ—बता भी दे बेटी (आँखों में आँसू आ जाते हैं) यदि आज मेरी आँखें होतीं तो मैं स्वय देख लेती।

कान्ता—घड़ी शान्ता के पीछे मेज पर पड़ी है। शान्ता मेज पर से हिले तो मैं समय मालूम करूँ।

माँ—शान्ता बेटी !

शान्ता—(कमरे के दूसरे कोने से) माँ, साढे आठ बजे हैं।

माँ—साढे आठ। रात्रि हो गई—रात्रि और तूफ़ान—इस तूफ़ान में अब कौन आयगा ?

शान्ता—मैंने विनोद से कहा था।

माँ—विनोद हमारे घर क्यों आने लगा। वह एक गरीब बहन से राखी क्यों बँधवाएगा ? विनोद··तुमने विनोद से कब कहा था ?

शान्ता—प्रातःकाल ही। वह पूजा-पाठ से निवृत्त हुआ ही था कि उनकी बहन ने उसके राखी बाँध दी थी और उसने उसे एक

पौंड दिया था—सचमुच का एक पौंड—सौने का पौंड। जब मैं विनोद के घर गई तो उस समय वह हँस-हँसकर अपनी बहन से बातें कर रहा था। लाल चन्दन का तिलक उसके मस्तक पर था, बाल पानी से भीगे हुए थे, कलाई में सुनहले तारों से बनी हुई राखी थी—मैंने उससे कहा 'भैया राखी बँधवा लो '(सजल नेत्रो से) उसने उत्तर दिया, 'शान्ता तुम घर चलो' मैं अभी आता हूँ। अब साढे आठ बजे हैं—रात हो गई।

मां—रात्रि और तूफान !

(शान्ता सिसकियां लेती है)

मां—रो नहीं मेरी बच्ची, मेरे समीप आ, यदि इस समय तेरा भाई होता—मेरा चाँद। हाय बुरा हो उन अत्याचारी डाकुओ का जो उसे उड़ाकर ले गए।

(खडका)

मां—कौन है ?

शान्ता—विनोद ..

(बिल्ली का बोलना)

कान्ता—(**कमरे का द्वार खोलकर**) नहीं बिल्ली है, वर्षा से आश्रय माँग रही है। बेचारी बिलकुल भीग गई है—आह, कितनी प्यारी बिल्ली है।

(बिल्ली की म्याऊँ-म्याऊँ)

मां—कान्ता इसे अन्दर ले आ।

कान्ता—परन्तु हम इसे खिलाएगे क्या ? घर में तो अब कुछ भी नहीं।

मां—सवेरे की एक रोटी बची थी।

शान्ता—(**लज्जित होकर**) माँ मुझे भूख लगी थी, मैंने खा ली।

माँ—यदि तुम्हारे पिता इस समय जीवित होते ।

कान्ता—(व्यंग्यपूर्वक) यदि''

माँ—क्या कहा ?

कान्ता—कुछ नहीं ।

माँ—कुछ तो कहा था बेटी—अपनी अन्धी माँ को न बताओगी ?

कान्ता—(चिढ़कर) कुछ कहा हो तो बताऊँ । तुम्हारे कान तो मानो हवा में प्रत्येक समय किसी की आवाज़ सुनते रहते हैं ।

माँ—परन्तु मुझे वह आवाज़ कभी सुनाई नहीं देती जिसमें मेरा चाँद-सा बच्चा पुकारा करता था—"माँ, माँ, मुझे भूख लगी है", "माँ, मास्टर ने मारा है" "माँ, मुझे पैसा दो"—आह उसका वह गोरा शरीर हर समय मुस्कराता हुआ चेहरा ''

कान्ता—(क्रोधपूर्वक) माँ ।

माँ—(अनसुनी करके) जब वह हँसता था तो उसके दाहिने गाल पर एक विचित्र प्रकार का गढा-सा पड़ जाता था जो मुझे बड़ा भला लगता था और जब मैं उसके बाल सँवारकर उसे टोपी पहनाती थी—उस समय मैं अन्धी न थी, बेटी''' .

कान्ता—माँ !

माँ—एक दिन वह स्कूल से भागता-भागता आया और कहने लगा—"माँ, आज कस्बे में स्थान-स्थान पर पर्चे लगे हैं कि आज यहाँ डाका पड़ेगा । कस्बे के सब लोग चिन्तित हो रहे हैं । मास्टर जी ने हमें जल्दी छुट्टी दे दी है । फिर कुछ समय पश्चात् चाँद के पिताजी भी आ गए । उन्होंने भी यही बात सुनाई । वह दिन जिस चिन्ता में गुजरा '' तुम्हारा तो उस समय जन्म भी न हुआ था । अच्छा हुआ वरना डाकू तुम्हें भी उठा ले जाते और फिर वह काली रात्रि—भयानक रात्रि '

कान्ता—माँ ।

माँ—(चीखकर) मेरा आठ वर्ष का बच्चा, पला पलाया, मेरा लाड़ला इकलौता चाँद। हाय वह सब-कुछ तो ले गए थे। परन्तु मेरे बच्चे को तो न ले जाते। मैंने उनके आगे हाथ जोड़े, अपने बाल खोलकर उनके पाँवों पर बिखेर दिए, परन्तु उन्होंने एक न सुनी। कहते थे एक मास के अन्दर पाँच हज़ार रुपया अदा कर दोगे तो तुम्हारा चाँद तुम्हें वापस मिल जायगा। मेरी इन आँखों के आगे वे मेरे लाल को उठाकर ले गए। तुम्हारे पिता रस्सियों से जकड़े चारपाई पर पड़े थे। चाँद चिल्ला रहा था। एक डाकू ने उसके मुँह पर तमाचा मारा और उसके होंठों से रक्त की धारा फूटकर बहने लगी। वे मेरे सामने मेरे लाल को ले गए - काश, मैं जन्म से अन्धी होती—यों रो-रोकर तो अन्धी न होती। तुम्हारे पिता भी इस सोच में घुल घुल कर मर गए कि कहीं से पाँच हजार रुपये का प्रबन्ध हो जाय ··

[बादल की गरज। वर्षा का शोर तेज हो जाता है]

खिड़की बन्द कर दो, हवा के फर्राटे मेरे गालों को मानो चीरे डालते हैं।

शान्ता—खिड़की खुली रहने दो कान्ता बहन, कदाचित् विनोद भैया आए और खिड़की बन्द देखकर लौट जाए।

कान्ता—(खिड़की के निपट जाती है और सिर निकालकर बाहर झाँकती है) कोई भी तो नहीं आ रहा। गली सुनसान पड़ा है। चौराहे पर पुलिस का सिपाही लैम्प के नीचे खड़ा वर्षा में भीग रहा है। अब कौन आएगा शान्ता बहन? शान्ता बहन तुमने एक विनोद से कहा, तो मैंने कितनों से कहा—राम भरोसे से, शंकर लाल से, रामनाथ से। परन्तु सब टाल गए। सब कहते थे कि घर आकर राखी बँधवाएंगे। परन्तु क्या अब

तक कोई आया ? कौन आएगा ? किसे आवश्यकता है गरीब बहनों से राखी बँधवाने की ? और फिर हमारी राखी भी क्या है ? कच्चे सूत का लाल धागा—जिसमें न जरी के तार, न मोतियों की लड़ियाँ, न रेशम के मुस्कराते फूल। हमारी राखी भी हमारे जीवन की भाँति फीकी, उदास और बे-रंग है। इस राखी को कौन पसद करेगा। तुम विनोद पर आस लगाए बैठी हो, बैठी रहो। मैं खिड़की बन्द किये देती हूँ।

मां—बेटी, यह अच्छा नहीं हुआ। यह राखी का पवित्र त्यौहार है। तुम किसी ब्राह्मण को बुला लातीं, उसी के राखी बाँध देतीं यह अच्छा नहीं हुआ बेटी। तुम्हें किसी के राखी अवश्य बाँधनी चाहिए थी।

कान्ता—(व्यंग से) तो जाकर उस पुलिसमैन के राखी बाँध आऊँ जो चौराहे पर खड़ा है।

मां—तुम तो बिना बात क्रोध करती हो बेटी।

शान्ता—कान्ता, आज तुम्हें क्या हो गया है ?

मां—कान्ता, कान्ता !

कान्ता—(ऊँचे स्वर से) तो मैं क्या करूँ ? जैसे मैंने पण्डित बनारसीदास के पुत्र को कहा नहीं। जैसे मैंने चतुर्वेदी जी के लड़के से हाथ जोड़कर प्रार्थना नहीं की कि आइये और हमसे राखी बँधवाइए। परन्तु कोई आए भी तो। इस घर में कौन आयगा ? और इस घर में कोई आए क्यों ? राखी बँधवाकर उसे कौन सी दक्षिणा मिल जाती। यही सूखी रोटियाँ और बासी दाल। और अब तो यह घर भी हमारा न रहेगा। मैंने तुम्हें बताया नहीं कि मालिक-मकान आज मुझे घर के बाहर मिला था। कह रहा था तीन महीने से किराया नहीं चुकाया गया है। यदि एक सप्ताह के अन्दर-अन्दर किराया न चुकाया गया

तो मकान से निकलना पड़ेगा।

मां—हे भगवान् इन लोगो का खून कितना सफेद हो गया है। परन्तु सभी लोग तो ऐसे नहीं होते। सब के हृदय पाषाण नहीं होते। राखी की कथा में श्रवणकुमार का वर्णन है। श्रवण-कुमार भी तो एक ब्राह्मण के पुत्र थे और उन्होंने अपने अन्धे माता-पिता की कितनी सेवा की थी। दिन-रात उन्होंने बहगी में बिठाकर उठाए फिरे और सारे भारतवर्ष की यात्रा कराई। आज श्रवणकुमारी का जयन्ती दिवस है और कोई गरीब बहन से राखी भी नहीं बँधवाता। आज राखी का पवित्र त्योहार है। लोग स्नान और पूजा पाठ के पश्चात् वेद-मन्त्रों के उच्चारण और हवन के साथ पुराने जनेऊ बदलते हैं मानो जीवन एक नया चोला और नया रूप बदलता है और मेरी बच्चियों की राखी कोई स्वीकार नहीं करता।

कान्ता—(कटु स्वर में) यह भी तो एक नया रूप है।

शान्ता—माँ, क्यों अपने जी को हलकान करती हो। कान्ता, तू क्यों कचोके-पर-कचोके दिये जाती है। माँ, इस जी जलाने से क्या लाभ है? अब सो जाओ।

मां—मैं सोती रहूँ अथवा जागती रहूँ—अब मेरे सोने और जागने में अन्तर ही क्या है। मेरे लिए तो समस्त ससार उसी दिन काली रात्रि बन गया जिस दिन मेरा लाल मुझसे छीना गया था। फिर अब पति का स्वर्गवास हो गया, जीवन की अन्तिम किरण भी लुप्त हो गई। मेरे लिए तो उस जीवन में अधकार-ही-अन्धकार है। यह वह काली रात्रि है बेटी, जिसका कोई प्रभात नहीं। वह पीड़ा है, जिसका कोई उपचार नहीं। वह दु.ख का निस्सीम सागर है, जिसका कोई किनारा नहीं।

(हवा का एक तीव्र झोंका, झरोखों में से एक दर्दनाक

सीटी बजाता गुज़र जाता है।) यह किसने पुकारा ?

शान्ता—माँ, कोई नहीं हैं। गली बिल्कुल खाली है। यह हवा झरोकों में से होकर गुजर रही है।

कान्ता—सो जाओ माँ, और अपने इन भीगे हुए गालों को पोंछ डालो—उठो, माँ।

माँ—बहुत अच्छा बेटी, बहुत अच्छा, मुझे ऊपर सोने के कमरे में ले चलो।

[फर्श पर लकड़ी टेकने और पग धरने की आवाज़। शान्ता गुनगुनाती है और फिर धीरे-धीरे मर्मस्पर्शी स्वर में गाती है—]

नीर भरे नयनन के पंछी, किस विध प्यास बुझाऊँ !
मन की वीणा टूट चुकी है, अब कैसे इसे बजाऊँ ?
छोटी-सी नयनन की नैया, बीच समाया सागर।
पलकों की पतवार लगाकर, किस विध पार लगाऊँ ?
पंछी, किस विध प्यास बुझाऊँ।
हृदय में दुःख-दर्द बहुत है, घाव बहुत हैं, पीर बहुत है।
फिर भी यह सूनी है बस्ती, कैसे इसे बसाऊँ ?
पंछी, किस विध प्यास बुझाऊँ।

शान्ता—कान्ता बहन, तुम रो रही हो ?

कान्ता—(खिड़की खोलकर) वर्षा थम गई।

(द्वार पर थपकी)

कान्ता—तुम्हारे भैया विनोद होंगे।

शान्ता—नहीं पण्डित विद्यानाथ होंगे।

कान्ता—दरवाज़ा खोलो।

(द्वार खुलने की आवाज़)

कान्ता—ओह आप हैं, पधारिये ! कहिये, इस समय कैसे आना हुअ
सम्भवत. आप राखी बँधवाने आए हैं। आप तनिक ठहरि
मैं अभी कलावा लाई।

मालिक मकान—मैं···अर ··र · र मैं राखी अ र र·· र
मैं आया था यह कहने कि आपने तीन महीने से किराया
दिया। ..मैं राखी नहीं बँधवाऊँगा। मैं तो कभी की बँ
चुका। बात यह कि यदि आपने परसों तक किराया न चुक
तो आपको मकान से निकलना होगा।

कान्ता—अच्छा, यह बात है। आज सवेरे एक सप्ताह की अ
मिली थी, अब दो दिन रह गए। श्रीमान् जी, आज राख
दिन भी आपको ऐसी बातें करते लज्जा नहीं आती। ठहरि
मैं लाई राखी !

मकान मालिक—अर ··र र नहीं नहीं, मैं तो केवल इतना क
के लिए आया था—मैं अब जाता हूँ। मुझे एक अत्याव
काम है।

[दरवाज़ा जोर से बन्द हो जाता है।]

[अन्तर]

शान्ता—गया।

कान्ता—नहीं, समझो एक विपत्ति और आई।

शान्ता—अब क्या होगा ! (अन्तर) कान्ता बहन (अन्तर) का
बहन, तुम खिड़की में खड़ी यह किसे देख रही हो !

कान्ता—अपने आने वाले दिनों को।

शान्ता—मैंने जो बिस्तर की चादर काढकर दी थी उसके मुझे के
आठ आने मिले।

कान्ता—दो रुपये किराये के लिए मैंने भी बचा रखे हैं।

कान्ता—हाँ, छ. रुपये और चाहिएँ।

शान्ता—अब क्या होगा ? परसों तक छ रुपये कहा से आयँगे ? मुझे तो कोई आशा दिखाई न देती। चारों ओर अधकार-ही-अधकार घिर रहा—

कान्ता—माँ की ज्योतिहीन आँखों की भाँति !

शान्ता—बहन, तुम तो ठिठोली करती हो—क्रूर ठिठोली। मुझे तुम्हारी यह आदत तनिक भी पसन्द नहीं। अपनी माँ के सम्बन्ध में ऐसे कटु वाक्य, तुम्हें क्या हो गया है। मैं तो पूछती हूँ कि यह छः रुपये परसों तक कहाँ से लायँगे।

कान्ता—सोचो, मस्तिष्क पर जोर दो।

शान्ता—मुझे तो कुछ नहीं सूझता।

कान्ता—जब सब दरवाजे बन्द हो जाते हैं तो स्त्री के लिए एक दरवाज़ा सदैव के लिए खुला रहता है।

शान्ता—तुम क्या कह रही हो !

कान्ता—इस ससार में पुरुष स्वामी है और नारी दासी—पुरुष खरीदार है और नारी बिकाऊ वस्तु। पुरुष कुत्ते और नारी उसकी भूख मिटाने वाली हड्डी। पुरुष राखी बँधवाना पसन्द नहीं करते, वे राखी तोड़ना पसन्द करते है !

शान्ता—बहन तुम्हें क्या हो गया है, तुम्हें क्या हो गया है ?

कान्ता—सुनो, इस खिड़की के पास एक और खिड़की है उसमें एक कामुक प्रकृति युवक प्रायः मुझे घूरा करता है। वह एक दृष्टि-कोण से सुन्दर भी है, धनवान भी है और फिर उसके मकान के नीचे गैरज है, उसकी एक मोटर भी है। उसने अनेकों बार मुझे प्रेम-पत्र लिखे हैं परन्तु मैंने कभी किसी का उत्तर नहीं दिया। मुझे उसकी खिड़की में अभी तक प्रकाश दिखाई दे रहा है।

शान्ता--कान्ता बहन, खिड़की बन्द कर दो।

कान्ता--तुम्हारी सब आशाएँ पूरी हो सकती हैं—सभी! छ. रुपये नहीं, सैकड़ों हजारों रुपये! बोलो?

शान्ता—कान्ता बहन, खिड़की बन्द कर दो, खिडकी से परे हट जाओ नहीं—मुझे स्वय ही उसे बन्द करना होगा।

[खिडकी बन्द होने की आवाज]

कान्ता—तुमने खिड़की बन्द कर दी—भोली शान्ता। परन्तु मैं इस खिड़की से बाहर तो नहीं कूद सकती थी। मैं तो जब जाऊँगी, सामने का दरवाज़ा खोलकर जाऊँगी।

[फर्श पर चलने की आवाज फिर तेज़-तेज भागने और किसी के शरीर की दरवाजे से टकराने की आवाज]

कान्ता—हटो मुझे जाने दो।

शान्ता—नहीं, मैं नहीं जाने दूँगी।

कान्ता—दरवाज़ा खोल दो।

शान्ता—नहीं, मैं दरवाज़ा कभी नहीं खोलूँगी।

कान्ता—मैं कहती हूँ, दरवाजा खोल दो, दरवाजा खोल दो।

शान्ता—नहीं, नहीं, कभी नहीं।

कान्ता—लगता है, तुम ऐसे नहीं हटोगी।

[खींचातानी की आवाज़--शान्ता के मुख से एक चीत्कार निकलती है, परन्तु कान्ता तुरन्त ही उसके मुख पर हाथ रख देती है।]

[अन्तर]

[दरवाजा थपथपाने की आवाज़]

[अन्तर]

आवाज—दरवाजा खोलो।

[अन्तर]

कान्ता—(धीमे स्वर में) दरवाज़ा खोल दो अब तो।

[दरवाज़ा खुलने की आवाज़]

[एक अजनबी का प्रवेश]

अजनबी—ओह, मैंने समझा यहाँ कोई रक्तपात हो रहा है। मैं बाहर से गुज़र रहा था कि मैंने एक चीत्कार सुनी।

कान्ता—चीत्कार या अट्टहास?

अजनबी—कुछ ही समझ लो बहन, परन्तु मुझे तो चीत्कार ही सुनाई दी।

शान्ता—बैठ जाइए, पधारिए!

अजनबी—धन्यवाद। क्या आप दोनों बहनें यहा अकेली रहती हैं?

कान्ता—यह आपने कैसे जाना कि हम दोनों बहनें हैं।

अजनबी—आपके चेहरों से।

शान्ता—जी, हम अपनी माता जी के साथ यहा रहते हैं।

अजनबी—यदि आप बुरा न मानें तो मैं पूछूँ कि किस बात पर झगड़ा हो रहा था!

कान्ता—राखी के त्यौहार पर।

अजनबी—आज राखी का त्यौहार है?

कान्ता—आपको मालूम नहीं।

अजनबी—मै बहुत समय से यात्रा पर हूँ। इस नगर में आया हूँ—यात्रा मे मनुष्य बहुत-सी बातें भूल जाता है।.... अच्छा तो फिर क्या हुआ?

कान्ता—यह कह रही थी कि राखी का त्यौहार अच्छा है और मैं कह रही थी कि मुझे इतना पसन्द नहीं। कदाचित् इसका एक कारण यह भी है कि हमारा कोई भाई नहीं है।

शान्ता—और आज किसी ने हमसे राखी नहीं बँधवाई।

कान्ता—और मैं बहन शान्ता से कह रही थी कि दरवाज़ा खोल दे

और सामने के मकान में······

शान्ता—चुप कान्ता, क्या बालकों-जैसी बातें करती है।

[अन्तर]

अजनबी—हुँ ! यह बात है" कान्ता बहन, तुम मेरे राखी बाँध दो और शान्ता बहन तुम भी!

कान्ता—क्या आप राखी बँधवायँगे ? सचमुच ?

शान्ता—परन्तु आप तो परदेसी हैं ?

अजनबी—परदेसी भी भाई बन सकते है बहन ।

कान्ता—मैं अभी राखी लाई।

शान्ता—आपका नाम क्या है ?

अजनबी—मुझे अजयकुमार कहते हैं।

कान्ता—लीजिए, हाथ आगे बढ़ाइये—शान्ता तुम भी दूसरी कलाई पर।

शान्ता—अजय भैया !

(सीढ़ियो पर मां के उतरने की आवाज)

शान्ता—यह क्या पौंड ! सचमुच के पौंड !! सौने के पौंड !!!

अजनबी—गरीब भाई की यह भेंट स्वीकार करो।

(लकड़ी टेकने की आवाज़ निकट आ जाती है)

शान्ता—(धीमे स्वर मे) माँ जी हैं।

मां—कौन है, क्या झगड़ा हो रहा है ?

शान्ता—(धीमे स्वर में) आप टिकटिकी लगाए इनकी आँखों की ओर क्या देख रहे हैं ? उन्हें कुछ दिखाई नहीं देता।

कान्ता—माँ, हम राखी बाँध रहे थे और शान्ता खुशी से नाच रही थी।

मां—क्या विनोद आ गए ?

शान्ता—नहीं माँ, यह अजय भैया हैं। (धीमे स्वर में) माता जी को

प्रणाम कहो ।

अजनबी—माता जी प्रणाम !

माँ—जीते रहो बेटा ! तुम कौन हो ? इधर कैसे आए ?

अजनबी—जी, मैं बाहर से गुज़र रहा था । इस कमरे में इन दोनों बहनों के झगड़ने की आवाज सुनी, दरवाज़े पर थपकी दी और (हँसकर) अन्दर चला आया । यहाँ इन दोनों नटखट लड़कियों ने मुझे राखी से बाँध दिया ।

माँ—बहनें हैं बेटा ! यह तुम्हारी बहनें हैं । इस उम्र में राखी बाँधने का बहुत चाव होता है । अच्छा बेटा, तुम इस नगर में कैसे आए हो ?

अजनबी—यों ही खोजता हुआ आ रहा हूँ । मैं किसी को खोजने निकला हूँ ।

माँ—किसे खोज रहे हो बेटा ?

अजनबी—अपने माता-पिता को । बहुत समय बीता मुजफ्फरगढ़ से मुझे डाकू उठाकर ले गए थे । बहुत समय तक मैं उनके साथ रहा, फिर एक दिन उनके चंगुल से भाग निकला । बम्बई जाकर नौकरी कर ली । फिर माता-पिता का पता लगाने निकला । मुजफ्फरगढ़ गया तो पता चला कि पिताजी का देहान्त हो गया और माताजी वहाँ से चली गईं । किसी ने इस नगर का पता दिया और मैं इधर से ।

माँ—(उठ खड़ी होती है और लकड़ी ज़मीन पर गिर जाती है) इधर आओ बेटा अजयकुमार, तनिक मेरे निकट आओ मैं तुम्हे अपनी अन्धी आँखों से देखना चाहती हूँ । · · · (पग धरने की आवाज़) ·· और निकट आओ बेटा— तुम्हारा चेहरा कहा है ? कहाँ हो तुम अजय कुमार बेटा, ये आँखें तुम्हें नहीं पहचान सकतीं, परन्तु माँ की उँगलियाँ तुम्हें

पहचान लेंगी—हाँ यह वही नाक है, वही होंठ, यह कान के पास वही मस्सा—मेरे लाल, मेरे चाँद, मेरी छाती से लग जाओ, बेटा ! तुम्हारे लिए मैंने कितने-कितने दु.ख सहे हैं। (सिसकियाँ लेती है।)

अजनबी—मा !

कान्ता, शान्ता—भैया !

माँ—हाँ-हाँ वही तो तो है—तुम्हारा भैया चाँद, वही घुँघराले बाल हैं, जिनमें कघी करके तुम्हें टोपी पहनाया करती थी। वही भवें और उनके ऊपर घाव का चिन्ह—बेटा, मुझे अच्छी तरह पकड़ लो, मुझे गिरने न देना, अपनी शक्तिशाली भुजाओं का सहारा दो मेरे चाँद, मेरी अन्धी आँखो के चमकते तारे—मेरी उजड़ी दुनिया के उजियारे · ··

अजनबी—माँ, मेरी अच्छी माँ !

[परदा]

नीलकण्ठ

नाटक के पात्र

शिवजी

पार्वती

जिज्ञासु

एक आवारा

पुजारी

भिखारी, जेब कतरे और साहूकार आदि

नीलकण्ठ

पहला दृश्य

[परदा उठता है तो कैलाश पर्वत की चोटी दिखाई देती है। एक ऊँचे सिंहासन पर शिव जी महाराज और पार्वती बैठे हैं—उनके चरणों में नन्दी बैल ऊँघ रहा है। स्टेज पर पौ फटने का-सा प्रकाश छाया हुआ है—बर्फ के कोमल-कोमल गाले धीरे-धीरे स्टेज पर गिर रहे हैं। परोक्ष में संगीत-ध्वनि धीरे-धीरे ऊँची होती है और कोरस (जिसमें पांच देव-दासियां हैं) शिवजी महाराज और कैलाश पर्वत की स्तुति में एक गीत गाते हैं। देवदासियां स्टेज की दाईं और बाईं दोनों ओर से नाचती हुई सामने आती हैं और स्टेज के बीच में आकर शिवजी महाराज को प्रणाम करके उनके सिंहासन के चारों ओर एक घेरा-सा बनाकर फिर केन्द्र की ओर लौट जाती हैं। वे कुछ समय तक नाचती और गाती रहती हैं।]

कोरस

कैलाश के ऊँचे पर्वत पर,
शिव शम्भू की बस्ती में,

इक कैफ़[1] है इक सरमस्ती है,
और नीले-नीले अम्बर पर
मस्त और रसीले बादल में
ऊदी और लाल घटाएँ हैं
काले और नीले बादल हैं
कैलाश के ऊँचे पर्वत पर

(नाच)

कैलाश के ऊँचे पर्वत पर
तारीक[2] और सर्द गुफाओं में
अमृत की धारा बहती है
और बर्फ में डूबी चोटियों पर
खामोशी छाई रहती है
कैलाश के ऊँचे पर्वत पर

(नाच)

कैलाश के ऊँचे पर्वत पर
शिव जी महाराज का डेरा है
पर इनके तेज और साहस ने
तीनो लोकों को घेरा है
लिपटे हैं नाग भुजाओ से
बहती है गग जटाओं से
मस्त और रसीली आँखें हैं
सुर्ख और नशीली आँखें हैं
यह पार्वती के स्वामी हैं

---

१. नशा २. अधेरी

निरन्तर अन्तर्यामी है
कैलाश के ऊँचे पर्वत पर
(तेज़ नाच)
कैलाश के ऊँचे पर्वत पर
हर जानिब[1] है तूफान बपा[2]
है तेज हवा से शोर मचा
हर जर्रा[3] खौफ से लरज़ाँ[4] है
पर शिवजी का लब[5] खंदाँ है
कैलाश के ऊँचे पर्वत पर

[देवदासियां गाती हुईं और नाचती हुईं शिवजी को प्रणाम करके विदा हो जाती हैं। शिवजी महाराज के चेहरे की मुस्कान धीरे-धीरे हँसी में बदल जाती है। नन्दी बैल कान खडे करता है और नथुनों से हवा को सूँघता है।]

पार्वती—महाराज यह हँसी कैसी?

शिव जी—कुछ नहीं, प्रिये।

पार्वती—कुछ तो है, महाराज। यह आपकी हँसी कह रही है कि कहीं कोई अद्भुत बात अवश्य हो रही है।

शिव जी—अद्भुत बात? इस मस्तक की आँख से ओझल क्या अद्भुत बात होगी?

पार्वती—फिर क्या भेद है, महाराज? बताइये तो सही।

शिव जी—पार्वती, तुम तो यों ही कोई बात लेकर पीछे पड़ जाती हो।

पार्वती—मैं तो पूछ कर रहूँगी।

शिवजी—तो सुनो।

[अन्तर]

---

१. दशा २. छाया हुआ ३ अणु ४. विकम्पित ५. होठो पर हंसी है

पार्वती--कहो, आप तो चुप हो गए ?

शिवजी--मैं चुप नहीं, परन्तु संसार तो बोल रहा है--सुनो, सुनो, तुम्हारे कान क्या सुन रहे हैं ?

[तूफान की गरज]

पार्वती--कुछ भी तो नहीं--वही हवा की तेजी और बर्फ का तूफान--कैलाश पर्वत का पुराना राग जो सदा से चला आया है।

शिवजी (व्यंग्य के भाव से)--जहाँ महादेव है वहाँ मौत और तूफान का राग सुनाई देता है--यह तो कोई अद्भुत बात न हुई, पार्वती!

[व्यंग्यात्मक हँसी]

पार्वती (रूठकर)--आप मुझे यों ही तंग करते हैं--बताते क्यों नहीं, आप ?

शिवजी (गम्भीर होकर)--तो सुनो प्रिये!

पार्वती--सुनाओ!

शिवजी--मेरी आवाज़ को न सुनो, संसार की आवाज पहचानो। क्या इस अँधे तूफान के सन्नाटों में तुम्हें कोई और आवाज नहीं सुनाई देती ?

[तूफान की गरज--दूर से 'हर-हर महादेव' की पुकार आती है।]

पार्वती--तूफान के भयानक भँवर में एक बिन्दु-सा है जिसके चारों ओर यह सारा तूफान चक्कर लगा रहा है--और यह आपका नाम है। (पृष्ठभूमि में 'हर हर महादेव' की पुकार बराबर सुनाई देती है।) ...

नहीं, नहीं--यह तो कोई भूला-भटका पथिक है--इस तूफान के भयानक भँवर में फँस गया है और आपको सहायता के लिए पुकार रहा है--(घबराकर) महाराज, आप

सुन रहे हैं इसे ? ... महाराज, इसकी सहायता करो, महाराज इसे बचाओ—यह आपका भक्त है।

शिवजी—तुम भूलती हो, इसे मेरी सहायता की आवश्यकता नहीं है—यह भटका हुआ पथिक नहीं है—यह एक बूढा तपस्वी है जो बहुत समय से तपस्या कर रहा है। इसे अपनी तपस्या पर बड़ा अभिमान है।

पार्वती—परन्तु, महाराज, यह तो आपको पुकार रहा है।

शिवजी—प्रिये, यह हमारी स्तुति नहीं कर रहा, बल्कि हमारा नाम लेकर उसके सहारे अपने-आपको ऊँचा करना चाहता है। इसका मन अभी इच्छाओं से मुक्त नहीं हुआ।

पार्वती—यह क्या चाहता है, महाराज ?

('हर-हर महादेव' की पुकार समीप होती जाती है।)

यह पुकार तो अब समीप आ रही है।

शिवजी—यह इसी तपस्वी की पुकार है। इसने निश्चय किया है कि यह शिव-रूप अवश्य देखेगा।

पार्वती—शिव-रूप !—परन्तु, महाराज, शिव-रूप तो आज तक कोई नहीं देख सका।

शिवजी—हाँ, परन्तु वह इसे देखना चाहता है, वह विराट् दर्शन करना चाहता है—जीवन की गति में जो शक्ति छिपी हुई है उसे मानुषी आँखों से देखना चाहता है। वह उस अदृश्य स्रोत को देखने का अभिलाषी है जहाँ से जीवन की धारा फूटती है और आकाश और पृथ्वी दोनों को अपनी बहती हुई ज्वाला से ज्वलन्त कर देती है। वह उस पवित्र आवरण को तार-तार कर देना चाहता है जो जीवन के अन्तिम भेद को अपने भीतर छिपाए हुए है।

पार्वती—वह ऐसा क्यों करना चाहता है ?

शिवजी—केवल इसलिए कि वह कुल संसार का रहस्य पाकर इस ब्रह्माण्ड पर राज्य करे।

पार्वती—राज का लोभ !

शिवजी—उसने इसके लिए कड़ी तपस्या की है। यह उसी तप का प्रताप है जो उसे इस तूफान में सीधा मार्ग दिखा रहा है, जो उसे कैलाश पर्वत के शिखर तक खींचकर ला रहा है—वह कैलाश पर्वत, जहाँ आज तक किसी मनुष्य के कदम नहीं पहुँचे—जहाँ बर्फ ऊषा की तरह पवित्र है—और जहाँ सदा मृत्यु का राग सुनाई देता है।

पार्वती—भगवान्, आप क्या करेंगे ? क्या ब्रह्माण्ड का राज्य एक मनुष्य की मुट्ठी में दे देंगे ?

शिवजी—उसे हमारे चरणों में आने दो।

जिज्ञासु—हर-हर महादेव—जय महादेव !

[तपस्वी आकर शिवजी के चरण छूता है।]

शिवजी—जिज्ञासु !

जिज्ञासु—महादेव की जय हो !

शिवजी—जिज्ञासु, हमने तुम्हारी कठोर तपस्या देखी। हिमाचल की तराइयों में, पहाड़ों की गुफाओं में तुमने अँधेरे, भूख, प्यास, मोह, भय से युद्ध किया है और उन पर विजय पाई है। धन्य हो तुम, जिज्ञासु ! तुम्हारा साहस बहुत ऊँचा था—तुम्हारा संकल्प पत्थर की चट्टान की तरह दृढ था। बोलो, क्या चाहते हो ?

जिज्ञासु—महाराज, मैं आपके दर्शन करना चाहता हूँ।

शिवजी (हँसकर)—दर्शन तो तुमने कर लिए—तुम्हारा तप तुम्हें कैलाश के अन्तिम शिखर तक खींच लाया—अब तुम और क्या चाहते हो ?

जिज्ञासु—नहीं महाराज, इस दर्शन से मेरी प्यास नहीं बुझी। मैं तो साक्षात् शिव रूप देखना चाहता हूँ। जिस रूप म आपको देख रहा हूँ, इस रूप मे तो मैंने आपको कई बार अपनी समाधि में देखा है। मैंने अपनी समाधि मे सब देवताओं के दर्शन किये हैं। देवताओं और राक्षसो का युद्ध देखा है। अमृत की खोज मे देवताओं को समुद्र बिलोते हुए देखा है, और आपको वह विष पीते देखा है जो अमृत-मथन के समय समुद्र के फेन से निकला था—वह विष जिसे पीने से हर एक ने इकार कर दिया था—वह विष, जो यदि ससार में फैल जाता तो जीवन-धारा सदैव के लिए शुष्क हो जाती! महाराज, मैंने देखा कि आपने वह विष अपने गले में उतार लिया, और आपका कण्ठ नीला हो गया—और आपकी जटाओं से जीवन-धारा गगा की तरह फूट निकली। महाराज, आप तो इस पृथ्वी पर जीवन के रक्षक हैं। मैंने आपको देखने के लिए ही यह कठोर तपस्या की है, और मैंने आपको देखा भी है, परन्तु महाराज, यह तो देवताओं का रूप है—मैं इससे भी पर जाना चाहता हूँ - और साक्षात शिव-रूप··· ··

शिवजी—जिज्ञासु, मैं तुम्हें वचन देता हूँ—शिव-रूप के सिवा और जो कुछ तुम्हें चाहिए माँग लो—मैं दे दूँगा।

जिज्ञासु—परन्तु महाराज, मुझे तो शिव-रूप देखने की लगन है।

शिवजी—सुनो जिज्ञासु, शिव-रूप को आज तक किसी ने नहीं देखा—इसे पाने की अभिलाषा अपने हृदय से निकाल दो।

जिज्ञासु—महाराज, यह दास अब आप के चरणों तक आन पहुँचा है—दर्शन करके ही वापस जायगा।

शिवजी—तुम बहुत हठीले हो, जिज्ञासु, (अन्तर) अच्छा, तो देखो।

[गरज—तूफान—सगीत का शोर—स्टेज पर रोशनी एक शोले की तरह लपकती है—एक क्षण के बाद अंधेरा छा जाता है। फिर तेज रोशनी होती है, फिर अंधेरा, शिवजी महाराज अपने आसन पर दिखाई नहीं देते—पृष्ठभूमि में संगीत के स्वर तीव्र होते जाते हैं।]

जिज्ञासु—महाराज, महाराज ! आप लुप्त हुए जा रहे हैं—इसी मृत्यु के राग में अदृश्य हुए जा रहे हैं।

शिवजी—देखो, जिज्ञासु, देखो !

जिज्ञासु—गगा की फूटती हुई धारा फैलती जा रही है—डमरू की ध्वनि तीव्र होती जा रही है—मस्तक की आँख के लाल लाल डोरों में से ज्वाला फूट रही है।

शिवजी—देखो, जिज्ञासु, देखो !

जिज्ञासु—गंगा की धारा ने समस्त ससार को अपनी लपेट मे ले लिया—मस्तक की आँख की ज्वाला ब्रह्माण्ड के एक सिरे से दूसरे सिरे तक फैल गई है। तेज—चहुँ ओर तेज-ही-तेज !

शिवजी—देखो, जिज्ञासु, देखो !

जिज्ञासु—(भयभीत होकर) समस्त ब्रह्माण्ड में अब इस तेज के अतिरक्त और कुछ नहीं दिखाई पड़ता। यह तेज भड़कता जा रहा है। गगा की धारा में अब बिजली के समान तेजी और लपक है—जैसे एक चमकती हुई खड्ग (अपनी आँखें अपने हाथों में छिपा लेता है।) हाय !

शिवजी—देखो, जिज्ञासु, देखो !

[एकदम तेज रोशनी और फिर स्टेज पर अंधेरा छा जाता है।]

जिज्ञासु—(आँखें खोलकर कराहते हुए) हा मैं अब कुछ नहीं देख सकता, महाराज ! यह बिजली की लपक मेरे हृदय में

उतर गई है—यह चमकती हुई खड्ग मेरी दृष्टि मे खुब गई है। महाराज, मै अब आपको नहीं देख सकता—कुछ भी नहीं देख सकता।

शिवजी—देखो, जिज्ञासु, देखो।

जिज्ञासु—अन्धेरा-ही-अन्धेरा। भयानक, भयकर अन्धेरा!! इस भीषण अन्धकार की छाया ने मेरी आत्मा को घेर लिया है। मेरे कानों में मौत का राग गूँज रहा है। महाराज, आप कहाँ चले गए? महाराज, मैं आपको नहीं देख सकता। अब तो मैं किसी वस्तु को भी नहीं देखता। (करुण स्वर से) मैं अन्धा हो गया हूँ, महाराज!

[मौत का राग, तूफान, डमरू की खनक]

शिवजी—(गूँजती हुई आवाज़ दूर से आती हुई प्रतीत होती है) जिज्ञासु, तूने अनहोनी और असम्भव बात को चाहा था। परन्तु तुझसे उस तेज की झलक न सही गई। तूने जीवन के उस परदे को तार-तार कर देना चाहा था, जिसमें वह आज तक छिपा रहा है। परन्तु याद रखो, तुम इस ब्रह्माण्ड के शिव-रूप को कभी नहीं देख सकते। तुम इसके पर्दे भले ही हटाते जाओ, प्रकाश बढ़ता जायगा—परन्तु अन्तिम पर्दे के हटने से पहले यह ज्वाला तुम्हें अन्धकार का वह दृश्य दिखाएगी, जो तुम अब देख रहे हो। इस प्रकाश से परे अन्धकार है—और यह वह अन्धकार है जिसके पार किसी मनुष्य की आँख नहीं देख सकती। जिज्ञासु, जाओ, एक बार फिर तपस्या करो, तुम्हारी पहली तपस्या अधूरी थी।

[तूफान का शोर और सगीत-ध्वनि मानो कोई मनुष्य हजारों फुट दूर नीचे फेंका जा रहा हो। फिर सगीत-ध्वनि धीरे-धीरे वायु मंडल में घुल जाती है और स्टेज पर उजाला

हो जाता है। जिज्ञासु विद्यमान् हैं और शिवजी महाराज सिंहासन पर बैठे हुए दिखाई देते हैं।]

पार्वती (भयभीत होकर)—महाराज, यह आपने क्या किया?

शिवजी—अब मुझसे क्या पूछती हो? तुमने स्वयं ही अपनी आँखों से इस दृश्य को देखा है।

[अन्तर]

पार्वती—महाराज, क्या जीवन की खोज करना पाप है?

शिवजी—वह जीवन की खोज जो गुफाओं के भीतर बैठकर की जाय, पाप है।

पार्वती—तो फिर जीवन क्या है?

शिवजी—जीवन क्या है? पार्वती, तुम हर समय उल्टे सीधे प्रश्न किया करती हो।

पार्वती—महाराज, क्या आप इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकते? इतना सरल प्रश्न

शिवजी—पार्वती, इस हँसी के कारण ही तुम कई बार हानि उठा चुकी हो।

पार्वती—मैं पूछती हूँ—जीवन क्या है? जीवन क्या है? जीवन क्या है? जब तक आप नहीं बतायँगे, मैं पूछती ही रहूँगी।

शिवजी (रुककर)—सुनो प्रिये, आज हम तुम्हें मनुष्यों की एक बस्ती में ले चलते हैं। आज शिवरात्रि है—मन्दिर के बाहर सड़क के किनारे भिखारियों का वेश धारण करके हम इस प्रश्न के उत्तर की खोज करेंगे।

पार्वती—मुझे स्वीकार है।

[परदा]

दूसरा दृश्य

[अग्रभूमि में शिव-मन्दिर की सड़क का एक भाग। केन्द्र में मन्दिर की सीढ़ियाँ और उससे परे मन्दिर का एक कोना दिखाई देता है। सड़क पर भिखारी बैठे हैं और मन्दिर की सीढ़ियों पर ब्राह्मण। आज शिवरात्रि है—इसलिए सड़क पर और मन्दिर की सीढ़ियों पर यात्रियों की भीड़ है—लोग आ-जा रहे हैं। स्टेज के बिलकुल दाईं तरफ अग्रभूमि में शिवजी और पार्वती भिखारियों के वेश में खड़े हैं—सबसे अलग, अकेले।]

पहला जेबकतरा—जय महादेव की !

दूसरा जेबकतरा—जय महादेव की। कहो, आज क्या हाल रहा ?

पहला जेबकतरा—भई आज तो बड़े आनन्द में रहे—चार सेठों की जेब काटी—एक स्त्री के कड़े—एक के लच्छे—(खनखनाता है)—बोल शिवशम्भु—हर का सौदा, हर का तम्बू। इस बार तो शिवरात्रि हमारे लिए बड़ी शुभ रही।

दूसरा जेबकतरा—अरे, भई, हम तो सुबह से घात लगाए खड़े हैं, कोई चिड़िया तक पास नहीं फटकी—कहीं दाव नहीं चला ·· और यह बूढ़ा और बुढ़िया—इन्हें देखा ? कैसे गरीब बने खड़े हैं। जरा सावधान रहना। (धीरे से) अपने ही भाई-बंधु होंगे।

[ठहाका—दोनों हँसते हुए चले जाते हैं।]

शिवजी (रुककर)—देखा, तुमने पार्वती—जीवन का एक पहलू यह

भी है। (तुरन्त लहज़ा बदलकर)—जय महादेव की! गरीबों पर दया करो—हम बूढ़े हैं, सुबह से भूखे हैं!

पहला भिखारी (शिव को घूरते हुए)—सुबह से भूखे हैं? कैसा घनचक्कर है यह बूढ़ा—ठीक तरह माँगना भी नहीं आता!

दूसरा भिखारी—हमारी जीविका में भी विघ्न डालता है। हमारे रास्ते में आकर खड़ा हो गया है। कौन से टोले के हो तुम? इससे पहले कहाँ भीख मागते थे तुम?

शिवजी—हमारा कोई टोला नहीं है।

पहला भिखारी—क्या कहा? कोई टोला नहीं? और घर से भीख मागने के लिए निकल पड़े हो! हा-हा-हा-हा—(दूसरे भिखारी की ओर मुँह करके) अरे, धुरकी मियाँ—इन्हें देखो तो! न अंधे—न लुंजे—न लगड़े—न अपाहज—ठीक तरह बोल भी तो नहीं सकते और बनते है भिखमगे! (शिवजी से) मेरी तरफ देखो—क्या तुम ऐसी आवाज लगा सकते हो? (लहजा बदलकर) "हाय, मुझ गरीब पर तरस कर जाओ रे, बाबा!"—यह है वह आवाज, जो एक मक्खी-चूस सेट की हथेली को भी नर्म कर देती है—"हाय, मुझ गरीब पर तरस कर जाओ रे, बाबा!"—हुँ! तुम क्या जानो भीख माँगना किसे कहते है!

[अन्तर। भिखारी परे चले जाते हैं।]

शिवजी—पार्वती, देखा तुमने? जीवन का एक पहलू यह भी है।

[अन्तर]

पहला साहूकार—शिव शम्भु, सेठ जी, शिव शम्भु!

दूसरा साहूकार—जय महादेव की!

पहला साहूकार—कहो, इतने दिन कहाँ रहे?

दूसरा साहूकार—एक कुर्की कराने के लिए गाँव चला गया था—

आज घर में शिव-पूजन था, इसलिए लौटना पड़ा।

[दोनो साहूकार बातें करते हुए चले जाते हैं]

[अन्तर]

पहला ब्राह्मण—जय महादेव की।

दूसरा ब्राह्मण—आज तो, पण्डित जी, न्यौतों की ऐसी भरमार रही कि खाते-खाते पेट फूटने लगा।

शिवजी—जय महादेव की! गरीबों पर दया करो। हम बूढे है, सुबह से भूखे हैं।

तीसरा ब्राह्मण—इस बूढे-बुढिया को देखा तुमने? ये किसान लोग जब बूढे हो जाते हैं, तो शहरों में भीख मांगने के लिए आ जाते हैं।

पहला ब्राह्मण (घृणा से सिर हिलाकर)—शिवशम्भु—शिव शम्भु। (चले जाते है—स्टेज की बत्तियां धीरे-धीरे बुझ जाती हैं।)

[परदा]

तीसरा दृश्य

[थोड़ी देर के बाद परदा उठता है। स्टेज पर धीमा-धीमा उजाला है—सड़क सुनसान है—मन्दिर की सीढ़ियों पर यात्री नहीं है—केवल मन्दिर में प्रकाश दिखाई देता है। स्टेज के बाईं ओर एक आवारा फटे कपड़े पहने आग जलाए बैठा है।]

पार्वती (हारी-थकी हुई)—महाराज, अब तो खड़े-खड़े टाँगें भी सुन्न होने लगीं · उफ! जीवन के कितने ही रंग देखे हैं आज। महाराज, क्या इस संसार में झूठ और धोखे का नाम ही जीवन है?

शिवजी (दुःखी होकर)—मनुष्य, मनुष्य को खाए जाता है।

[मन्दिर का पुजारी दिन-भर की भेंट अपने कंधों पर लादे हुए मन्दिर की सीढ़ियों से उतरता है।]

पार्वती (हँसकर)—महाराज, भूख तो मुझे भी लग रही है—और इन मनुष्यों की बातें सुनकर मेरा जी चाहता है कि इन्हें खा जाऊँ! (हँसकर) परन्तु महाराज, यहाँ खड़े रहकर क्या करोगे? अब तो यह सड़क भी सुनसान हो गई है और वह मन्दिर के पुजारी भी चले आ रहे हैं—देखो, चढ़ाव के बोझ से कंधे झुके हुए हैं।

शिवजी—(भिखारियों की तरह)—जय महादेव की! महाराज, हम पर दया करो। हम गरीब परदेसी हैं, भोजन माँगते हैं। आपकी कृपा से रात को यहीं मन्दिर के द्वार पर सो रहेंगे।

पुजारी (क्रुद्ध होकर)—परदेसी हो, तो हम क्या करें ? किसी धर्मशाला मे जाओ—यहाँ रास्ता रोके क्यों खडे हो ? देखो, देखो, हमे छूना नहीं—शिवशम्भु, शिवशम्भु। किसी धर्मशाला मे जाकर पड रहो, वहाँ भोजन भी मिल जायगा और सोने के लिए स्थान भी—और देखो, यह मन्दिर शिवजी महाराज की पूजा के लिए है, न कि भिखमगो के सोने के लिए। अगर तुमने यहाँ पाव पसारने की कोशिश की, तो जेलखानों मे डाल दिए जाओगे। सुना तुमने, पुलिस पकडकर ले जायगी ? शिव शम्भु—शिव शम्भु, कैसे-कैसे मूर्खों से पाला पड़ता है !

(सिर झुकाए हुए धीरे-धीरे चला जाता है।)

शिवजी (दुख से)—चला गया, हमारा सबसे बडा पुजारी चला गया ! पार्वती तुमने जीवन देखा ?

पार्वती (दुख-भरे लहजे में) —महाराज, कितना कुरूप और वीभत्स है यह जीवन ! कितना भयानक है यह चित्र। कितना दुःख-दायक है यह जीवन ! महाराज, इन लोगो की आत्माएँ अन्धी हो चुकी हैं। इनके हृदयों को पाप ने ढक लिया है। इनके चेहरे झूठ कपट और धोखे से लिए हुए हैं। (आँखों में आँसू भरकर)—महाराज, क्या इन्हीं लोगो के लिए आपने विष का प्याला पिया था ?

[आवारा—जो अभी-अभी आग ताप रहा था, अचानक चीख मारकर उछल पडता है।]

आवारा—अहा हा-हा-हा—किल-किल-किल—किलकी-किलकी—किल-किल-किल।

पार्वती—यह कौन है, महाराज ?

शिवजी—एक आवारा—आओ, जरा इसके पास चलें।

पार्वती—नहीं महाराज, बहुत देख लिया इस ससार को। अब वापस

चले ।

आवारा—आओ, आओ, आओ ! अहा । हा-हा—किल-किल किल—किलकी- किलकी—किल-किल-किल—आओ—आओ बुड्ढो, इधर आओ ! आग तापोगे ? यह देखो हमने लकड़िया इकट्ठी की हैं—अब इस ढेर को आग लगायेंगे—आग में से लपटें निकलेंगी—फिर हम बैठकर तापेंगे। सब मनुष्य भाई-भाई हैं—अहा-हा-हा ! किल किल-किल !!

पार्वती—क्या कहते हो, तुम ?

आवारा—सब मनुष्य भाई-भाई हैं—अहा-हा-हा—किल-किल-किल—किलकी-किलकी—किल-किल-किल—सब मनुष्य भाई-भाई हैं। सब मनुष्य मरते हैं, इसलिए सब मनुष्य भाई-भाई है। सब मनुष्य परमात्मा के बनाए हुए हैं, इसलिए सब भाई-भाई हैं। सब मनुष्य भाई-भाई हैं। तुम्हें भी जाड़ा लग रहा है न ? अहा-हा-हा—सब मनुष्य भाई-भाई है—आओ बैठो—आग तापो —किल-किल-किल !

पार्वती (चकित होकर)—महाराज, यह कैसी बहकी-बहकी बातें करता है !

आवारा—क्यों उदास हो गई ? क्या तुम्हें भूख लग रही है। इधर आओ—इधर बैठो—यह देखो लकड़ियों का ढेर। अब इसमे हम आग लगायेंगे—आग मे से ज्वालाएँ निकलेंगी—फिर हम तीनों मिलकर उन ज्वालाओं को खायँगे। भूख मिटाने के लिए अग्नि की ज्वालाएँ अति उत्तम होती है—अहा हा हा—किल-किल-किल-किलकी-किलकी—किल-किल-किल इस ससार में भूख बहुत है। सब मनुष्य भाई-भाई हैं। इस ससार को आग लगा दो—इन ज्वालाओं से सब मनुष्यों की भूख मिट सकती है—सब मनुष्यो की—हा-हा-हा-हा—

तुम भूखी हो—तुम भूखी हो—यह लो—यह लो—यह लो—
(रोटी का एक टुकड़ा पार्वती को देता है।)

पार्वती—यह क्या है ? ओह ! इसमें से बहुत बुरी गंध आ रही है !

आवारा—यह लो—हा-हा-हा-हा—किल किल-किल—किलकी किलकी—किल किल किल—यह रोटी का टुकड़ा है। इसे एक कुत्ते ने सूँघकर छोड़ दिया था, मगर है यह एक रोटी का टुकड़ा। मैंने इसे अपने लिए रख छोड़ा था। परन्तु तुम्हारी भूख मेरी भूख से अधिक है—हा-हा-हा-हा—सिडनी स्मिथ को जानती हो ? किल-किल किलकी—किल-किल किल—खा लो—अभी खा लो।

शिवजी (दुख-भरे लहजे में)—यह फटी-फटी निगाहों से क्या देख रही हो, पार्वती ! इसे स्वीकार कर लो। यह एक सड़ी हुआ रोटी का टुकड़ा नहीं है—यह वही अमृत है, पार्वती, जिसके लिए हमने और सब देवताओं ने समुद्र का कोना-कोना छान मारा था। यही जीवन का वह अन्तिम रहस्य है जिसे एक आवारा साधु अपने कलेजे से चिपटाए हुए है !

[पार्वती धीरे-धीरे रोटी के टुकड़े की ओर हाथ बढ़ाती है।]

[परदा]

काहिरा की एक शाम

नाटक के पात्र

हसीना

परी

सूबेदार

रेवाज

दुकानदार, मदरासी वेटर, सिपाही

(वर्तमान काल)

काहिरा की एक शाम

पहला दृश्य

[काहिरा में अंग्रेजी दवा वेचने वालों के वाजार का एक भाग। वीच में तीन दुकानें पूरी, और दाएँ-वाएँ दोनों तरफ दो दुकानें आधी या चौथाई दिखाई देती हैं। वाजार में चहल-पहल नहीं। दुकानों पर ग्राहक हैं, पर गिनती में वहुत थोड़े। दुकानों पर जो वोर्ड लटके हुए हैं, उन पर अंग्रेजी, फ्रांसीसी और डच भाषाओं में नाम लिखे हुए हैं। परदा उठता है—इसके १५-२० सैकिंड वाद हसीना वाईं तरफ से प्रवेश करती है, और जल्दी-जल्दी चलती हुई वीच की दुकान पर जा खडी होती है। हसीना न तो वहुत लम्वी है, न ठिगनी—पतली छरहरी है, वाल विखरे हुए हैं और आवाज में कँपकँपाहट।]

हसीना—मुझे केरोनल (keronol) की तीन गोलिया चाहिए।

दुकानदार नम्वर १—वहुत अच्छा, मादाम! लेकिन, डॉक्टर का नुस्खा कहाँ है?

हसीना—तीन गोलियों के लिए डाक्टर का नुस्खा!

नम्वर १—अय—नहीं नहीं, मादाम, (हँसता है) तीन गोलियों से कुछ नहीं हो सकता, तीन गोलियों से तो एक कुत्ते का पिल्ला भी नहीं मर सकता, यह लीजिए।

[हसीना गोलियो की पुडिया लेकर दाम निकालने के लिए वटुआ खोलती है। वाईं तरफ से एक सजीला हिन्दुस्तानी सिपाही

प्रवेश करता है। उसके कंधे पर लगे हुए फीतों से मालूम होता है कि वह हिन्दुस्तानी सेना में सूबेदार है। सूबेदार उसी दुकान पर आ खड़ा होता है, जहाँ हसीना है।]

सूबेदार—तीन गोलियाँ एस्प्रीन की दीजिए।

नम्बर १—बहुत अच्छा, हुजूर।

सूबेदार—जल्दी।

नम्बर १—लीजिए।

[हसीना जल्दी से दाम काउण्टर पर फेंककर बाईं तरफ मुड़ जाती है और आखिरी दुकान पर जा खड़ी होती है। सूबेदार की निगाहें हसीना पर जमी हैं—एस्प्रीन की गोलियाँ जेब में डाल-कर वह भी उसी दुकान पर जा पहुँचता है जहाँ हसीना खड़ी है।)

हसीना—मुझे केरोनल की तीन गोलियाँ दीजिए।

दुकानदार नम्बर २—अभी लीजिए मादाम, मगर डॉक्टर का नुस्खा?

हसीना—तीन गोलियों के लिए डॉक्टर का नुस्खा! तीन गोलियों से तो एक पिल्ला भी नहीं मर सकता।

दुकानदार नम्बर २—हा-हा हा—आप सच कह रही हैं मादाम, ये लीजिए तीन गोलियाँ केरोनल की।

सूबेदार—तीन गोलियाँ एस्प्रीन की दीजिए, झटपट।

नम्बर २—अभी लीजिए हुजूर, एक सेट।

(सूबेदार दाम निकालता है। हसीना जल्दी से दाईं तरफ मुड़ जाती है और आखिरी दुकान पर, जो केवल आधी दिखाई दे रही है, पहुँचकर रुक जाती है। एक-दो क्षण के लिए सोचती है, फिर काउण्टर पर जाकर वही सवाल दुहराती है। सूबेदार जेबों में हाथ डाले धीरे-धीरे उसी दुकान पर आ खड़ा होता है।)

हसीना—क्या आपके पास केरोनल की गोलियाँ हैं?

दुकानदार नम्बर ३—मादाम, क्या आपके पास डाक्टर का नुस्खा है? यह ज़हर है, मादाम!

हसीना—मुझे केवल तीन गोलियाँ चाहिएँ—और जनाब, तीन गोलियों से तो एक पिल्ला भी नहीं मर सकता।

नम्बर ३—हा-हा-हा—ठीक कहा, आपने, (अन्तर) ये लीजिए, तीन गोलियाँ—पाँच सैंट।

सूबेदार—मुझे तीन गोलियाँ एस्प्रीन की दे दीजिए।

नम्बर ३—एक सैंट।

सूबेदार—ठीक है।

(परदा)

दूसरा दृश्य

[पृष्ठभूमि में समुद्र की लहरें, सूर्य अस्त हो रहा है। अग्र-भूमि में समुद्र-तट की रेत, जो समुद्र की लहरों से जा मिलती है। दाहिनी ओर से हसीना प्रवेश करती है—उसके पीछे-पीछे सूबेदार चला आ रहा है—पतलून की जेबों में हाथ डाले, सीटी बजाता हुआ चला आ रहा है। बाईं तरफ जाते हुए हसीना रुक जाती है और सूबेदार की तरफ मुड़ती है। वह थकी हुई और घबराई हुई-सी दीख पड़ती है। सूबेदार सीटी बजाना बन्द कर देता है—हसीना की तरफ देखकर मुस्कराता है और जेबों से हाथ निकालकर अपनी उंगलियों पर गिनता है।]

सूबेदार—तीन और तीन छः, और तीन नौ—

हसीना—आप कौन हैं? आप क्यों मेरा पीछा कर रहे हैं? भले आदमी इस तरह औरतों का पीछा नहीं किया करते।

सूबेदार—तीन और तीन छः, और तीन नौ—

हसीना—आप क्या कह रहे हैं?

सूबेदार—तीन और तीन छः, और तीन नौ—आपकी जेब में इस समय वेरोनल की नौ गोलियाँ हैं। इन गोलियों से एक पिल्ला चाहे न मर सकता हो, लेकिन इन्हें खाकर एक सुन्दर महिला अवश्य अपने प्राण त्याग सकती है।

हसीना—आपका मतलब?

सूबेदार—मानवजीवन ईश्वर की सबसे बड़ी देन है—इसे केवल

सत्य के लिए ही बलिदान करना चाहिए। आत्म-हत्या पाप है—और आप युवती हैं और सुन्दर। जब आप काफे में से अकेली निकलीं, तो मैं आपके पीछे हो लिया। मैंने देखा—आप शोकातुर और उदास हैं—आपकी आँखों में आँसू भरे हैं—और फिर आपने कैमिस्ट की दुकान से केरोनल की तीन गोलियाँ मोल लेकर जेब में रख लीं—दूसरे कैमिस्ट की दुकान से तीन, और—

हसीना—रास्ता छोड़िए—आपको इस तरह मेरा रास्ता रोकने का कोई अधिकार नहीं।

सूबेदार—अधिकार है—मैं हिन्दुस्तानी हूँ—आप भी हिन्दुस्तानी हैं—हम दोनों एक ही देश के हैं—और दोनों अपने देश से दूर—

हसीना—अपने देश से दूर—(सिसकियाँ लेती है)

सूबेदार—आप रोएँ नहीं—आप रोएँ नहीं—मुझे बताएं तो सही, क्या बात है? आप कहाँ रहती हैं?

हसीना—ग्रॉन्ड काफे में।

सूबेदार—ग्रॉन्ड काफे में—आप—आप ...

हसीना—मैं वहाँ एक नर्तकी हूँ—मेरा नाम हसीना है।

सूबेदार—रोइये नहीं, रोइये नहीं—आपको रोते देखकर मुझे दुःख होता है। क्या आप वहाँ अकेली रहती हैं?

हसीना—नहीं, मैं रेवाज के साथ रहती हूँ—वह' 'वह मुझे नाच सिखाता है। वह मेरा उस्ताद है, मेरे साथ मिलकर नाचता है। कुछ दिन हुए मेरी और उसकी लड़ाई हो गई—उसने मुझे पीटा—मुझे—मुझे बेंत से मारा—यह देखो, यह देखो यह देखो—

सूबेदार—जालिम, वहशी, कमीना!

हसीना—उसने मुझे कई बार पीटा है। जान से मार डालने की धमकी दी है। वह शराब बहुत पीता है और मुझ पर बहुत ही सन्देह करता है। मैं उससे बहुत घृणा करती हूँ। विचित्र प्रकार का मनुष्य है—मैं ऐसे पुरुषों से घृणा करती हूँ—मैं सभी पुरुषों से घृणा करती हूँ। सभी पुरुष स्त्रियों को खिलौना समझते हैं—उन्हे खिलौना मानकर उनसे खेलते हैं—और जब क्रोध आ जाय, तो उन्हें फर्श पर फेंककर टुकड़े-टुकड़े कर डालते हैं। स्त्री का जीवन सैलुलाइड के बने खिलौने से भी बुरा है,—क्योंकि स्त्री में आत्मा नहीं होती—नहीं होती न ?

सूबेदार—अवश्य होती है—(हंसकर) परन्तु आपने तो वेरोनल की नौ गोलियाँ मोल ली हैं—क्या आप इनसे अपनी आत्मा को स्वतन्त्र और अपने अस्तित्व को अलग रखना चाहती थीं ?

हसीना—मैं इनसे आत्महत्या करना चाहती हूँ—यह सच है, परन्तु इसका क्या इलाज है ? मुझे रेवाज ही ने नृत्य सिखाया है—उसही ने मुझे पाला है—शिक्षा दी है। मैं इस ससार में अकेली थी—मुझे मालूम नहीं मेरे माँ-बाप कौन थे। जब आँख खुली तो मैं भिखारियों की टोली में थी। उत्तरी भारत के कई बड़े-बड़े नगरों में मैं भीख माँग चुकी हूँ, और अब भी क्या अच्छी दशा है ? हमारा सारा जीवन ही भीख माँगते-माँगते बीत जाता है। वह शराब पीता है—मुझे बेंत से मारता है—मुझे कहीं आने-जाने नहीं देता। कई बार उसने मेरी आबरू लेने की कोशिश भी की है।

सूबेदार—और इतनी-सी बात पर आप अपने प्राण देने के लिए तैयार हो गई ! आप भी क्या बच्चों की-सी बातें करती हैं ! मेरे विचार में इसका इलाज तो यह है कि आप रेवाज से अलग हो जावें—और किसी काफे में नौकरी कर लें। आप नाचना

तो जानती ही हैं—और—

हसीना—ठीक है, सुन्दर हूँ, जवान हूँ शरीर में आकर्षण है कदाचित् इसलिए आप मेरा रास्ता रोके खड़े हैं—लेकिन मैं अपनी आबरू बेचकर रोटी कमाना नहीं चाहती। एक बार सीधा रास्ता देखकर दुबारा उस गन्दी, घिनावनी, जहरीली दलदल में नहीं फँसना चाहती। लेकिन क्या इस मर्दों की दुनिया में औरत की कोई सुनता है? कोई उसकी परवाह करता है? सब ही उसके रूप के प्यासे हैं—उसका अपना कोई भी नहीं। मुझे आज रेवाज से अलग हुए पाँच दिन हो चुके हैं—मैं दर्जनों काफी-खानों मे घूम चुकी हूँ—कहीं कोई ऐसी नौकरी नहीं देता कि मेरी आबरू बची रहे। बूढ़े-बूढ़े गंजे सिरों वाले मालिक मुझे घूरते हैं—मुस्कराते हैं—घिघियाते हैं—ऐसी-ऐसी शर्तें रखते हैं कि जी चाहता है कि जूती उतारकर खोपड़ी पिल-पिली कर दूँ। लेकिन औरत क्या कर सकती है? मेरी जेब में जो पैसे थे वे तो काफे ने खत्म हो गए—बाकी ये हैं नौ केरोनल की गोलियाँ—(सिसकियाँ लेती है।)

सूबेदार—हम—(अन्तर) क्या काहिरा में रेवाज़ के सिवा तुम्हारा और कोई जानकार नहीं?

हसीना—जानकार तो कई होंगे—सुन्दर स्त्री का जानकार कौन बनना नहीं चाहता?

सूबेदार—अय—मेरा मतलब यह न था। ईश्वर की सौगन्ध, मेरा मतलब यह न था। मैं जानना चाहता था—कि—कि—

हसीना—मैं तुम्हारा मतलब समझ गई। एक और नर्तकी है—परी उसका नाम है—बड़ी मुश्किल से निर्वाह करती है बेचारी—मैं उसके पास नहीं जाना चाहती। लेकिन तुम कौन हो, जिससे मै ऐसी बाते कर रही हूँ—हटो, मुझे जाने दो—

हट जाओ !

सूबेदार—देखिए, देखिए। हसीना, मेरी बात सुनो—ठहर जाओ—परमात्मा की सौगन्ध—तुम यह बात कदापि नहीं कर सकतीं। मैं कभी ऐसा नहीं होने दूँगा। देखो—देखो यह थोड़ी-सी नगदी है—मेरे पास इस समय यही कुछ है। हम दोनों एक ही देश के हैं—मुझे अपना भाई समझो—यह लो, यह सोने की अँगूठी है—हिन्दुस्तान से चलते समय यह मेरी माँ ने मुझे अपने हाथों से पहनाई थी—मैं यह पवित्र निशानी तुम्हे सौंपता हूँ। अपनी आबरू बचाने के लिए अगर तुम्हे इस अगूठी को भी बेचना पड़े तो बिलकुल न हिचकना। अब तुम सीधी अपनी सहेली परी के पास चली जाओ। नहीं, ठहरो—वे केरोनल की गोलियाँ मुझे दे दो—शाबाश! जिन्दगी से घबराना नहीं चाहिए। जिन्दगी में बहुत से दुश्मनों से युद्ध करना पड़ता है—हम भी दुश्मनो से युद्ध कर रहे हैं—धैर्य के साथ। आत्महत्या कायरता है—ठहरो, ठहरो—मैं तुम्हें तुम्हारी सहेली के घर पहुँचा आता हूँ।

(परदा)

तीसरा दृश्य

[एक जनाना कमरा पलंग, कुर्सियो और परदों से सजा हुआ है। केन्द्र से दाहिनी ओर एक बडी-सी खिड़की है और बाईं ओर एक बन्द दरवाज़ा। परी एक मूढे पर पसरी हुई पडी है। एक छोटी-सी तिपाई पर विलायती शराब की बोतल है, बोतल खाली है, और शीशे का प्याला औंधा पड़ा है, अर्थात् परी की तरह पसरा पडा है। परी की आँखें बोझल है—शरीर गुदगुदा और वस्त्र कुछ देसी, कुछ विलायती। परी के शरीर और उसकी बातचीत से मालूम होता है कि उसने जिंदगी बहुत देखी है—शायद आवश्यकता से अधिक।]

[कोई दरवाज़ा खटखटाता है।]

परी—कौन है ?

हसीना-(बाहर से)—हसीना।

[दरवाज़ा खुलता है—हसीना धीरे-धीरे पग धरती हुई भीतर आती है।]

परी—अन्दर आ जाओ, हसीना! कहाँ रहीं तुम इतने दिन ? (अन्तर) यह नई अँगूठी मोल ली है ?

हसीना—अँगूठी तो पुरानी है, परन्तु मेरे लिए नई है।

परी—कैसी बहकी-बहकी बातें करती हो! खैर तो है ? रेवाज का क्या हाल है ?

हसीना—मुझे रेवाज़ से मिले आज पाँच दिन हो गए।

परी—पाँच दिन ! हसीना, तुम क्या कह रही हो !

हसीना—कह तो रही हूँ, मुझे रेवाज से मिले पाँच दिन हो गए—एक-दो-तीन-चार-पाँच !

परी—इधर आओ, मेरे समीप बैठो—तुम्हारी आँखों के आँसू अभी तक सूखे नहीं—क्या रेवाज ने तुम्हें फिर मारा है ?

हसीना—नहीं, नहीं, परी—मैं आज—मैं आज बहुत खुश हूँ। मैंने आज एक ऐसा मनुष्य देखा है जिसमें आत्मा थी।

परी—आत्मा तो सबमें होती है—लेकिन, खैर, तुम तो सदा ही अनोखी बातें किया करती हो। यह बताओ कि इन पाँच दिनों में तुम कहाँ-कहाँ घूमीं ? बड़ी वह हो तुम !—मेरे पास क्यों न आ गईं ?

हसीना—अब जो आ गई हूँ। कुछ न पूछो, परी, मुझ पर क्या बीती है। रेवाज से लड़कर जब मैं काफे से बाहर निकली तो मेरी जेब में थोड़े-से ही सिक्के थे—इन दिनों उन ही पर गुजारा होता रहा। एक गन्दे से होटल में ठहरी रही। इधर-उधर नौकरी के लिए कोशिश करती रही। आज मेरी जेब में बस जहर खाने को पैसे बाकी रह गए थे।

परी—फिर तुमने क्या किया ?

हसीना—मैंने उन पैसों का ज़हर मोल ले लिया।

परी—हाय, तुम तो बहुत बुरी हो, हसीना ! भला कहीं इतनी सी बात पर भी जान दी जाती है—बावली हुई हो ?

हसीना—ज़रूर मर जाती—अगर मुझे रास्ते में एक सूबेदार न मिल गया होता।

परी—वह सूबेदार कौन थे ?

हसीना—यह तो मैं नहीं जानती—हिन्दुस्तानी सेना, जो यहाँ शत्रु लड़ने के लिए आई है, उसमें होगा। लेकिन, परी, यह मैंने

पहला मनुष्य देखा है जिसमे आत्मा थी। उसने मेरी जेब रुपयों से भर दी—मेरी उँगली ने यह सोने की अँगूठी पहना दी—और मुझे स्वयं तुम्हारे दरवाज़े तक छोड़ गया।

परी—तुम उसे अन्दर आने को कहतीं, मैं भी उसे देख लेती। बहुत मनोहर सूरत है क्या!

हसीना—हाँ, हाँ—लेकिन उसने अन्दर आने से इन्कार कर दिया—कहता था, फिर कभी मिलूँगा। ईश्वर साक्षी है—मैंने ऐसा अच्छा आदमी आज तक नहीं देखा—कभी नहीं देखा। मुझे ऐसा मालूम होता है कि मुझे, जिसका इस संसार में न कोई भाई है, न बहन, न माँ, न बाप—आज एक साथी मिल गया है। परी, मुझे लगता है कि अब मैं संसार के समस्त कष्टों और विभीषिकाओं का साहस से सामना कर सकूँगी।

[कोई दरवाजा खटखटाता है।]

परी—कौन है?

रेवाज—मैं हूँ रेवाज—ओह—तुम यहाँ हसीना! पाँच दिन से तुम्हें ढूँढ रहा हूँ—पिछले पाच दिनों से क़ाहिरा की गलियों और बाज़ारों की धूल छानता रहा हूँ। मुझे मालूम होना चाहिए था कि तुम यहाँ हो। यह मेरी गलती है—खैर—बहुत सी गलतियों की तुमसे क्षमा माँगनी है। मैं बहुत लज्जित हूँ। हसीना, ईश्वर साक्षी है कि मैं बहुत ही लज्जित हूँ। मुझे माफ़ कर दो—केवल यह मानकर कि मैं तुमसे प्रेम करता करता हूँ।

हसीना—तुम अपने आपको कभी नहीं बदल सकते, रेवाज़! इन बातों से अब क्या लाभ? मैं अब कोई और जगह खोज लूँगी—तुम कोई और नर्तकी ढूँढ लो।

रेवाज—नर्तकी तो बहुत सी मिल जायँगी, परन्तु मैं तो केवल तुम्हें चाहता हूँ। मुझे ऐसा लगता है कि अब मैं तुम्हारे सिवा और

किसी के साथ नृत्य कर ही नहीं सकता। मैं सौगन्ध खाकर कहता हूँ कि अब तुम्हें कुछ नहीं कहूँगा। मैंने तुम्हें सदैव अपने प्राणों से भी प्रिय समझा है। मैं बहुत ही लज्जित हूँ। तुम्हारे सामने अब मैं कभी शराब को हाथ भी नहीं लगाऊँगा।

हसीना—रेवाज़, तुम कभी नहीं बदल सकते।

रेवाज—मैं बदलकर दिखला दूँगा—मुझे तुमसे प्रेम है—परन्तु अब मैं तुम्हें किसी बात से नहीं रोकूँगा—तुम्हें पूरी आजादी होगी—जहाँ मर्जी जाओ—घूमो—खेलो—दूसरे लोगों से मिलो—जिससे जी चाहे मिलो। हसीना एक मलका होगी और मैं एक तुच्छ दरबारी, जिसे केवल तुम्हारे साथ नृत्य करने का सौभाग्य प्राप्त रहेगा। बोलो, तुमने क्षमा कर दिया। सिकन्दरिया के एक काफे के साथ बहुत अच्छा सौदा होनेवाला है—वे तीन सौ रुपये रोज़ देंगे—तीन सौ रुपये रोज़! तनिक सोचो तो हसीना, इन तीन सौ रुपया में हम क्या कुछ नहीं कर सकते?—और फिर तुम्हे परी आज़ादी होगी—मान जाओ, हसीना! परी, तुम ही इससे कहो कि अभागे रेवाज़ को क्षमा कर दे। मैंने ही इसे शिक्षा दी है—इसे तितली की तरह थिरकना सिखलाया है। मेरे जीवन की सारी उमगें और मनोकामनाएँ इसी के साथ बँधी हुई है। मैं इसकी हर-एक इच्छा पूर्ण करने के लिए तैयार हूँ।

परी—पिछली बातों को जाने दो, हसीना! रेवाज़ इस समय तुम्हारी हर बात मानने को तैयार है।

हसीना—इस समय!

रेवाज—नहीं-हर समय। मैं कड़ी-से-कड़ी कसम खाने को तैयार हूँ। तुम्हारी आँखों के नीचे गढे पड़ गए हैं, हसीना—सिकन्दरिया का जलवायु तुम्हारे रूप-लावण्य को फिर से निखार देगा—

और फिर तीन सौ रुपये रोज ! बोलो—हम आज रात ही को सिकन्दरिया रवाना हो जाएगे।

हसीना—बहुत अच्छा, योंही सही—लेकिन तुम्हारे लिए यह अन्तिम अवसर है, रेवाज !

(परदा)

चौथा दृश्य

[रेवाज का कमरा। यह रेवाज के सोने का कमरा है और उसके उठने-बैठने का भी। इसी कमरे में वह शराब पीता है और इसी कमरे में वह हसीना को संगीत और नृत्य सिखाता है। तबला, सारंगी, वायलिन, शराब की बोतलें, प्याले, बिस्तर, और तकिये पर एक नग्न स्त्री का चित्र। केन्द्र से दाईं ओर एक दरवाजा, अन्दर स्टेज की ओर, एक और कमरे में खुलता है। यह हसीना का कमरा है। सामने केवल शृङ्गार-मेज दिखाई देती है, जिसके सामने हसीना बैठकर बाल सँवार रही है। उसके टखनों पर बंधे हुए घुँघरू कभी-कभी एक मीठी-सी झंकार पैदा कर देते हैं। रेवाज शराब पी रहा है और गुनगुना रहा है। बाईं ओर स्टेज के अन्त में एक और दरवाजा आधा दिखाई दे रहा है।]

रेवाज—(गुनगुनाते हुए)—'इस दौर में मय और है, जाम और है, जम और।'[1] (शराब उँडेलता है) 'साकी ने बना दी रविशे लुत्फो करम और।' (पीता है) आह, ज़िंदा रहने के लिए इस युग में शराब होनी चाहिए—ऐसी शराब जिसकी तेज़ी और कड़वाहट के सामने जीवन के कड़वे घूँट मधुर मालूम हों—मधुर—जैसे हसीना के मधु-भरे होंठ। औरत भी एक प्रकार की शराब है—ही-ही-ही,—शराब और औरत—

---

१ इस युग में शराब और प्याले भी और जैसे हैं और साकी के ढंग भी निराले हैं। पहले-जैसा अब कुछ नहीं रहा।

औरत और शराब—और हसीना—ऐ—ऐ—अभी तक तैयार नहीं हुई क्या? (ऊँची आवाज से) हसीना डार्लिंग!

हसीना—(दूर से) आई!

रेवाज—(गुनगुनाता है)—'साकी ने बना दी रविशे लुत्फो करम और'—और अब न वह साकी है—न लुत्फ है—न करम है। रेवाज बेटा, अब तो यही जिंदगी है—अय—सुना—काफी-खानों में नाचो—बेवकूफ नाविकों को और भी बेवकूफ बनाओ—इस सरकार को सलाम झुकाओ—उस सरदार को प्रणाम करो।

नौकर (आधे खुले दरवाजे से अन्दर आकर)—हुजूर, सरदार कह रहे हैं कि मिस हसीना के नाच का समय हो गया।

रेवाज—ऐं, हाँ, हाँ—सरदार को हमारा सलाम कहो—हसीना अभी हाजिर होती है, मेक-अप कर रही है। हसीना, डार्लिंग!

हसीना—आई! मेरा वेश कैसा है?

रेवाज—अति सुन्दर—इस काले वेश में तो तुम तारों भरी रात की रानी-जैसी सुन्दर दिखाई देती हो। तुम्हारे चमकते हुए मस्तक पर जो दूधिया मोतियों का झूमर सजा हुआ है, इस लड़ी से कई भोले राही भटक जायँगे—लेकिन भटकना ही तो जिन्दगी है! कुछ सोचा था हम कहाँ से-कहाँ आ पहुँचे। (सुराही उँडेलता है।)

हसीना—और मत पियो! 'रात की रानी' के नाच में तुमको मेरे साथ नृत्य करना है।

रेवाज—नृत्य और मदिरा—भोली लड़की! ये दोनों ज्वालाएँ साथ-साथ लपकती हैं—नृत्य और मदिरा! अगर मैं मदिरा न पीता, तो आज इतना अच्छा नर्तक बन सकता?

हसीना—अगर तुम मदिरा न पीते तो आज क्यों अपने देश से दूर

दर-दर की ठोकरें खाते फिरते ? हिन्दुस्तान का वह कौन सा थियेटर है, जहाँ से तुम निकाले नहीं गए—जहाँ तुम स्टेज पर नाचते-नाचते औंधे मुँह चकराकर न गिर पड़े हो ! इस काफीखाने में भी एक दिन यही होगा ।

रेवाल—जब होगा, देखा जायगा—(कड़ककर) और देखो, मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, लेकिन इसका यह मतलब नहीं कि मैं तुम्हारी हर बात मान लूँगा । आखिर, तुम मुझे क्या कह सकती हो—मैंने तुम्हें बनाया है । मैं शराबी सही, लेकिन तुम्हें नर्तकी किसने बनाया है—किसने तुम्हारा निर्माण किया है ? तुम एक भिखमगे की लड़की थीं—माना कि तुम सुन्दर थीं, लेकिन तुम्हारे हाथों में यह नागिन-जैसे बल किसने पैदा किये ? किसने तुम्हारे टखनों पर बजती हुई पायल में संगीत की चपलता उत्पन्न की ? तुम्हारे शरीर के अंग-अंग में मेरे ही नृत्य की कलाकारी है—मेरी आत्मा की छाया है—मेरे ही दिल की धड़कन है ! मैं तुमसे प्रेम करता हूँ, हसीना, मुझे नृत्य-कला से प्रेम है—मुझे (कुल-कुल की आवाज) इससे भी प्रेम है । मैं तुम्हें नहीं छोड़ सकता—मैं इसे भी नहीं छोड़ूँगा । जिन्दगी—जानती हो—जिन्दगी नाम है भटकने का ! जिन्दगी भी एक अनुपम नृत्य है । रात की रानी ! आज तो तुम सचमुच रात की रानी प्रतीत होती हो । इधर आओ—मेरे निकट आओ, हसीना, हसीना—

हसीना—हटो, छोड़ दो मुझे—छोड़ दो मुझे—मैं कहती हूँ—(चाँटा मारती है) मैं तुमसे घृणा करती हूँ ।

नौकर (आधे खुले दरवाजे से अन्दर आकर)—सरदार कह रहे हैं—मिस हसीना के नाच का समय हो गया ।

[हसीना भागती हुई अधखुले दरवाजे से चली जाती

है—और घुँघरुओं की झंकार मन्द होती जाती है, कुछ क्षण की निस्तब्धता के पश्चात् रेवाज धीरे-धीरे हँसता है, और हँसते हुए अपने प्याले में शराब उँडेलता है।]

रेवाज (शराब के प्याले की ओर देखकर)—कि चचल है रात की रानी—और आसानी से वश में नहीं आयगी - (कुल-कुल की आवाज) और पीयो—कि चचल है रात की रानी—और आसानी से वश में नहीं आयगी। लेकिन आयगी तो जरूर, रेवाज, एक-न-एक दिन रजनी का दुपट्टा ढलकेगा—रजनी का दुपट्टा ढलकेगा—हा, हा, हा—रजनी का दुपट्टा ढलकेगा—रजनी का

[रेवाज कुर्सी से लगकर सो जाता है, और खर्राटे लेने लगता है, शराब का प्याला तिपाई पर औंधा पड़ा है, और लाल शराब फर्श पर फैल गई है।]

[परदा]

पांचवां दृश्य

[एक मिस्री काफे का भीतरी दृश्य। प्लेटफार्म पर हसीना गाती है—और नाचती है।

हसीना गाती है—

'घूँघट में गोरीजले'

हसीना गाती हुई और नाचती हुई प्लेटफार्म से नीचे उतरकर काफे में बैठे हुए लोगों के पास से गुजरती है, और ग्राहकों की ललचाई हुई आंखों को अपने शरीर की रूप-रेखाएँ दिखाती जाती है। मेजों और कुर्सियों के बीच में से गुजरती हुई वह वापस प्लेटफार्म पर आ जाती है।]

एक आदमी—सरदार, यह हिन्दुस्तानी लड़की तुमने देखी?

दूसरा आदमी—चाँद का टुकड़ा है!

पहला आदमी—इसका नृत्य देखकर मुझे ऐसा लगता है कि मानो पूर्णिमा का चाँद नील नदी के बहते हुए पानी पर हिलोरें ले रहा है।

एक पंजाबी—ओ, बूटामिया! वेख, ओए, वेख—एह नज़ारा अम्बर-सर वेख्या सी!

एक मदरासी वेटर—Very Good Dance—very good, my dear—in southern India, very good dance, my dear Don't you know me? I am Venkata Raghavachariar I have been

to Bristol, Oxford, Cambridge. Don't you know me? I am Venkata Raghavachariar, khansama in this Cafe, Sir.

पांचवां आदमी—वैल, Iced coffee लाओ, हम दोनों के लिए।

मदरासी वेटर—सर, यस, सर!

पांचवां आदमी—सूबेदार, इस नाच के बारे में तुम्हारा क्या विचार है।

सूबेदार—नाच तो इससे अच्छे भी मैंने देखे हैं, लेकिन इसमें कोई शक नहीं कि लड़की सुन्दर है। मै हर रोज़ इस काफे में आकर इसका नाच देखता हूँ—हर रोज़। यही चीज़ होती है, यही वेटर।

पांचवां—(हंसकर) और यही सूबेदार—अरे, क्या कर रहे हो!

सूबेदार—गुल्दस्ता फेंकना चाहता हूँ—और एक मुलाकाती कार्ड—वह गया—

मदरासी वेटर—yes, Sir, very good dance, Sir, Venkata Raghavachariar.

पांचवां—मुस्करा रही है तुम्हारी तरफ देखकर।

सूबेदार—यही तो मुसीबत है—मुस्कराए जाती है और हमें उल्लू बनाए जाती है।

पांचवां—बनाए जाती है—जैसे इससे पहले तुम उल्लू नहीं थे!

मदरासी वेटर—Iced coffee, Sir, Take it, Sir, I am Venkata Raghavachariar, Sir. Thank you, Sir

सूबेदार—ओह! यह कम्बख्त अभी तक सिर पर खड़ा है! भागो यहाँ से-किसी और मेज़ को देखो।

[परदा]

छठा दृश्य

[वही रेवाज का कमरा—बाईं तरफ के दूसरे दरवाजे पर जोर-जोर से खट-खट की आवाज आती है। रेवाज भागकर जाता है और दरवाजे की तरफ देखता है। फिर खट-खट होती है—धीरे-धीरे, मधुर-मधुर खट-खट—जैसे यह खट-खट नहीं, एक चुम्बन है—एक हल्का-सा, मीठा चुम्बन—]

रेवाज—अन्दर आ जाओ।

[हसीना झूमती हुई आती है]

रेवाज—यह दरवाजा खटखटाने की क्या जरूरत थी ?

हसीना—(भोलेपन से) मुझे सरदार ने बताया है कि यह सभ्य पुरुषों का व्यवहार है।

रेवाज—सरदार ने ?

हसीना—और सरदार ने मुझे यह बताया कि मेरा आज का नाच बहुत ही अच्छा था। मैं आज बहुत ही खुश हूं। (गुनगुनाती है)

[हौले-हौले कदमों से नाचती है]

रेवाज़—और यह पीले-पीले फूलों का गुच्छा भी सरदार ने दिया है ?

हसीना—नहीं तो—यह—यह—

रेवाज—रुक क्यों गई—बोल, बोल—यह गुलदस्ता तुझे किसने दिया है, कमबख्त लड़की ?

हसीना—छोड़ दे मेरा हाथ—जालिम-बदमाश—

रेवाज—नाचना तो तूने मुझसे सीखा है, लेकिन यह शिष्टाचार तूने किससे सीखा है? ये गुलदस्ते मे बँधे हुए नोट भी क्या तुझे सरदार ने दिये हैं? और यह मुलाकाती कार्ड?

हसीना—छोड़ दो मेरा हाथ।

रेवाज—सूबेदार—अच्छा तो यह हैं वह हज़रत, जो हर रात को काफे मे तुम्हारे नाच के समय दिखाई देते हैं—स्टेज से बाईं तरफ चौथी मेज़ पर—वही हैं न सूबेदार साहब? क्या सदेश भेजा है? "मै डेढ घण्टे के बाद जहाज पर हूँगा। डेक (deck) पर मुझे मिलें। ईश्वर जाने, फिर कब मुलाकात हो! —तुम्हारा सूबेदार।" अच्छा! तो यह है तुम्हारा प्रेमी!

हसीना—बको मत, मेरा हाथ छोड़ दो।

रेवाज—कभी नहा, मैं अपने जीते-जी तुम्हें इस फौजी अफसर की बगल में नहा जाने दूँगा। ईश्वर की सौगध, तुम मेरी हो—सिर से पाँव तक मेरी हो। मैं कभी तुम्हें अपने चंगुल से मुक्त नहीं करूँगा। मुझे क्या मालूम था कि तू हर रोज शाम को सूबेदार के साथ बागों की सैर करती है। उसे अब यह खुशी दुबारा नसीब न होगी। और उसे अधिकार भी क्या है कि दूसरे की खुशी को छीन ले—उसकी खुशियों को बरबाद कर डाले?

हसीना—और तुम्हे यह अधिकार है कि तुम एक निहत्थी, असहाय स्त्री के हृदय को रोद डालो? उसकी खुशियों के हरे-भरे उद्यान को उजाड़ डालो? उसकी यौवन की उमगों और मनोकामनाओं को अपनी काम-पिपासा की अग्नि में झुलसाकर सदैव के लिए भस्म कर डालो—यहाँ तक कि उसके जीवन मे सुख आनन्द की अन्तिम किरण भी लुप्त हो जाय—और उसकी आत्मा के खण्डहरों मे सायँ-सायँ करने वाली रात के

भयानक अँधेरे फैल जायँ ? कमीने, वहशी, क्या तुझे काहिरा की वह शाम याद है जब तूने गिडगिड़ाकर मुझसे माफी माँगी थी—और कहा था कि मैं अब कभी तुझसे दुर्व्यवहार नहीं करूँगा—तेरी स्वतंत्रता में कभी बाधा नहीं डालूँगा—तू एक मल्का होगी और मैं एक तुच्छ दरबारी। मल्का—औरत उस समय तक मल्का होती है जब तक वह मर्द की लालसा-पूर्ति के विरुद्ध आवाज न उठाये। मल्का—औरत उस समय तक मल्का होती है, जब तक वह मर्द की हर उचित, अनुचित इच्छा पूरी करती रहे। मल्का—शायद यह मर्द की दासता का दूसरा नाम है। छोड़ दे मेरा हाथ। मैं उससे मिलने के लिए अवश्य जाऊँगी। वह शत्रु से युद्ध करने जा रहा है। ईश्वर जाने वापिस लौटे या न लौटे। हे ईश्वर, कहीं यह हमारी अन्तिम भेंट न हो—

रेवाज—(पीटता है)—ईश्वर जाने ? क्या वास्तव यह तुम्हारी अन्तिम भेंट थी। अब तुम उसे कभी न देख सकोगी। मै तुम्हें समुद्र के किनारे नहीं जाने दूँगा। वह अपने जहाज़ पर तुम्हें देखे बिना ही जायगा—इस जिन्दगी में उसे तुम्हारी सूरत देखनी दुबारा नसीब न होगी—तुम्हारे प्रेमी को

हसीना—तुम झूठ कहते हो—वह मेरा प्रेमी नहीं है। हाँ, उसने मेरी सहायता अवश्य की है। उसने मेरे प्राण बचाए हैं। उसने मुझे जीवन से, मनुष्यों से, हाँ उन मनुष्यों से जिनसे मुझे घृणा है प्रेम और सहानुभूति करना सिखाया है। मेरी जीवन-नौका, जो निराशा और विपत्ति की प्रलयकारी धारा पर बहती हुई चली जा रही थी, उस शूरवीर के शौर्य और प्रोत्साहन से फिर किनारे पर आ लगी। परन्तु उसे मुझसे प्रेम नहीं था (सिसकी लेकर) क्या ही अच्छा होता की वह मझसे प्रेम

करता। वह मेरा प्रेमी होता तो मैं आज यहा न होती—तुम्हारी दुष्ट सूरत न देखती—और तुम्हारी जुबान से ये वचन न सुनती जो भाले बनकर मेरे कलेजे मे चुभे जा रहे हैं ···· उसे अपना कर्तव्य प्यारा था—वह अपने देश का सिपाही था—यहा शत्रु से लड़ने आया था—वह मुहब्बत के झमेलों में न उलझना चाहता था। क्या ही अच्छा होता कि तुम उसके बलिदान—उसके आत्म त्याग का—अनुभव कर सकते। मेरा शरीर, मेरे प्राण, मेरी आत्मा—सब कुछ उसके लिए थे, परन्तु उसने अपने कर्तव्य को श्रेष्ठतर माना। पर एक तुम हो—मनहूस—नीच—कमीने—जो एक जॉक बनकर मेरे जीवन से चिपटे हुए हो। मुझे जाने दो—मै कहती हूँ—मुझे जाने दो!

रेवाज—कहाँ जाओगी? अब इस विचार को अपने मन से निकाल दो। मैं जॉक ही सही, परन्तु मैं लहू नहीं पीता—मैं तो शराब पीता हूँ— आज तुम भी पियो। यह तुम्हारे प्रेम की अन्तिम रात है—और तुम्हारे सुहाग का अतिम क्षण, जो काहिरा के बाजारों में बसा, और सिकन्दरिया के काफ़े में उजड़ गया।

(दरवाजा बन्द कर देता है)

हसीना—क्या कर रहे हो—मुझे छोड़ दो—दरवाज़ा खोल दो—परमात्मा के लिए। रेवाज, मैं तुम्हारे पॉव पड़ती हूँ—परमात्मा के लिए एक बार मुझे उससे मिलने दो—केवल एक बार ''उसका चेहरा देख लेने दो—फिर मैं सदैव के लिए तुम्हारी हो जाऊँगी। मैं परमात्मा की सौगध खाकर कहती हूँ, रेवाज, मैं फिर कभी उससे मिलने की कोशिश न करूँगी। मैं उसकी याद को भी दिल से भुला दूँगी। केवल एक बार उसे देख लेने दो, रेवाज—रेवाज···

[दरवाजे से लगाकर सिर झुका लेती है, और फिर घुटनों के बल झुक जाती है ।] [जहाज की कूक]

रेवाज—तुम्हारे जाने का अन्तिम मार्ग भी बन्द हो गया—अब तुम उससे कभी न मिल सकोगी । आओ—आओ—इधर आओ, हम तुम दोनों प्रेम से वंचित हैं—आओ, इस प्रेम-वेदना को इस अरुण मदिरा में डुबो दें—पियो, पियो, पियो—

अब जोए-वारे जिन्दगी चुपचाप सी है, हाँ, कभी-
उट्ठी सदाए दर्द जब कोई किनारा कर गया ।[1]

[जहाज़ की कूक]

हसीना—चला गया—सदा के लिये खो गया—(सिसकती है)

रेवाज़—मैंने तुम से प्रेम किया है, तुमने सूबेदार से प्रेम किया है, सूबेदार ने अपने कर्तव्य से प्रेम किया है। क्या तुम इस फैलती हुई जंजीर की कड़ियाँ देख सकती हो जो मनुष्यों और उनके दिलों में फैलती जा रही है ? प्रेम और कर्तव्य, कर्तव्य और प्रेम, इन दो मंजिलों के बीच भटकने का नाम जीवन है—पियो, पियो—

जिन्दगी इक रक्स जावदाँ है प्यारी ।[2]

[पृष्ठभूमि में जहाज़ की कूक, जहाज के चलने की आवाज, (अन्तर) इस बीच में केवल हसीना की सिसकियाँ सुनाई देती हैं । रेवाज फिर कुर्सी से लगकर सो गया है, और खुर्राटे ले रहा है—हसीना की सिसकियाँ और रेवाज के खर्राटे—प्याला तिपाई पर औंधा पड़ा है और लाल शराब फर्श पर फैल गई है ।]

[परदा]

---

१ अब जीवन-धारा चुपचाप बहती है परन्तु जब कोई छोड़-कर चला था तो एक दर्दभरी चीख उठी थी ।

२ जीवन निरन्तर नृत्य है प्रिय !

सराय के बाहर

नाटक के पात्र

अन्धा भिखारी	
मुन्नी	अन्धे भिखारी की जवान बेटी
भिखारिन	अन्धे भिखारी की पत्नी
जानी लँगड़ा	एक चालाक भिखमगा
एक आवारा कवि	
सराय का मालिक	
बीबी	सराय की नौकरानी

कुछ शिकारी और उनकी पत्नियाँ

सराय के बाहर

[एक पहाड़ी नगरी की सराय के दरवाजे पर दरवाजे से कुछ गज की दूरी पर अन्धा भिखारी और उसकी पत्नी अलाव पर बैठे आग ताप रहे हैं। मुन्नी सराय के बड़े दरवाजे पर खड़ी सराय की नौकरानी से बातें कर रही है।]

मुन्नी—बीबी, कुछ खाने को दोगी? सुबह से भूखी हूँ।

बीबी—परे हट, मुरदार, क्यों अन्दर घुसी चली आती है, जा किसी मुस्टंडे की बगल में बैठ और चैन से रह, तेरी जवानी को आग लगे।

मुन्नी—बीबी, बिना बात क्यों गाली देती हो?

बीबी—गाली! अरी दो टके की भिखारिन, तुझे भी गाली लगती है! ओहो, मेरी शर्म की मारी लाजवन्ती—दिन-भर नैन मटकाती फिरती है, और सराय के मुसाफिरों को ताकती फिरती है—और अब रात के समय बड़ी भोली-भाली, बड़ी शरीफ, बड़ी वह, ऊँह, चुड़ैल!

मुन्नी—बीबी!

बीबी—बीबी की बच्ची, अरी अगर मैं तुझे गाली देती हूँ तो उसके बदले तुझे खाना भी तो देती हूँ, तुझे और तेरे बूढ़े भिखारी बाप को और तेरी माँ चुड़ैल कुटनी को। दो गालियों में क्या यह सौदा महँगा है? मुझे देख, इस सराय में सुबह से लेकर शाम तक झूठे बरतन

माँजती हूँ, कुए से पानी निकालती हूँ, मालकिन और मालिक की सौ-सौ खुशामदें करती हूँ, और—अच्छा, देख, इस समय मुझे न सता, मुसाफिरखाने के अन्दर इस समय बहुत लोग आए हुए जमा हैं। मुझे कइयों की देखभाल करनी है। जब यह लोग खाना खा चुकेंगे, इस खिड़की की ओर आ जाइयो, और जो कुछ तेरे भाग्य में होगा, ले जाइयो। अरी देख, अब इन मोटे-मोटे नयनों मे आँसू न छलका—हाय राम, इन भिखारियों ने तो नाक मे दम कर रखा है! मैं मालकिन से कहती हूँ कि इन भिखमगों को कम-से-कम सराय के बाहर दरवाजे पर तो इकठे न हो होने दिया करे।

(सराय का दरवाजा बन्द कर देती है।)

भिखारिन—मुन्नी!

मुन्नी—आई, माँ!

भिखारिन—क्या हुआ मुन्नी?

(अन्तर)

अधा भिखारी—मुन्नी बेटा, बड़ी भूख लगी है।

मुन्नी—लो बापू मुझे खा लो! भूख लगी है, भूख लगी है! जब सुनो भूख लगी है। न जाने यह पेट है या कुआँ—कभी भरता ही नहीं। उधर बीबी अलग गालियाँ देती है और इधर ये मेरी जान को खाए जाते हैं! भूख लगी है तो मै रोटी कहाँ से लाऊँ? बीबी कह गई है कि जब खिड़की खुलेगी तब रोटी मिलेगी।

अधा भिखारी—खिड़की कब खुलेगी?

मुन्नी—जब मुसाफिर खाना खा चुकेंगे।

अधा भिखारी—मुसाफिर कब खाना खत्म करेंगे?

मुन्नी—जब खिड़की खुलेगी।

अंधा भिखारी—जब खिड़की खुलेगी · कब खिड़की खुलेगी ? मैं मैं कुछ नहीं जानता, मैं कुछ नहीं जानता, मुन्नी तू क्या कह रही है जब से मेरी आँखों मे रोशनी नहीं रही, मुझे समय पर भीख की रोटी भी कोई नहीं लाकर देता। मुन्नी की माँ, क्या तुम्हारे पास थोड़ी-सी रोटी भी नहीं है ? हाँ, नहीं होगी—मैं अन्धा हूँ—बूढ़ा हूँ—अपनी ढीठ बेटी के आसरे हूँ।

भिखारिन—सब्र करो, अब थोड़ी देर में बीबी खिड़की खोलेगी, फिर तुम्हें पेट-भर खाना मिलेगा। आज सराय मे बहुत से मुसाफिर आए हैं। मैं तो हर रोज प्रार्थना करती हूँ कि सराय मुसाफिरों से भरी रहे, जिससे उनकी प्लेटों से बहुत-सा झूठा खाना हमारे लिए बच जाया करे।

मुन्नी—लेकिन, माँ, कई मुसाफिर तो इतने पेटू होते हैं कि प्लेटें बिलकुल साफ कर देते हैं और खाना जरा भी नहीं बचता। ऐसे अवसर पर अगर बीबी सचमुच दयावान न हो तो ·

भिखारिन—बुरी बातें मुँह से नहीं निकाल, वह सबका दाता है · तोबा, तोबा—आज कितनी सरदी है। यह तेज बर्फीली हवा शरीर को चीर डालती है। मुन्नी, जरा आग तेज़ कर दे।

(अलाव की लकड़ियां इधर-उधर सरकाती है)

मुन्नी—यह चीड़ की लकड़ियाँ धुआँ ज्यादा देती हैं, आग कम।

भिखारिन—तो जगल से काहू की लकड़ियाँ चुन लाया कर—मैंने तुझे कई बार समझाया है।

मुन्नी—माँ काहू का जगल बहुत घना है, मुझे डर लगता है।

भिखारिन—बावली हुई है, डर काहे का ?

अन्धा भिखारी—मुन्नी, देख, अभी खिड़की खुली कि नहीं ? यह कौन आ रहे हैं ?

मुन्नी—मुसाफिर है, सराय के अन्दर जा रहे है। अच्छा मैं जाकर खिड़की के पास खडी होती हूँ। बापू आशा है कि इस बार कुछ-न-कुछ जरूर ही मिलेगा।

(चली जाती है)

भिखारिन—तुमने सुना, मुन्नी को काहू के जगल मे लकड़ियाँ चुनने से डर लगता है—

अन्धा भिखारी—हा, मुन्नी जवान हो गई है।

भिखारिन—तुम इसका ब्याह क्यों नही कर देते ?

अन्धा भिखारी—इस नगरी में तो कोई ऐसा भिखमगा है नहीं—सुना है कि शहरों के भिखमगे बड़े अमीर होते हैं। मुझे एक बार सराय का एक मुसाफिर बता रहा था कि उसने एक अखबार में पढा था कि एक शहर में—मुझे उस शहर का नाम याद नहीं रहा, सुन्दर-सा नाम था—एक भिखमगा रहता था। जब वह मरा तो मुन्नी की मा, वह साठ-सत्तर हजार रुपया छोड़कर मरा! साठ सत्तर हजार रुपया कितना होता है—तुम्हें मालूम है ?

भिखारिन—नहीं, पर मैं सोचती हूँ कि मेरी मुन्नी को भी कोई ऐसा ही भिखमगा मिल जाय।

अन्धा भिखारी—तुमने तो मेरी बात नहीं मानी, वह बनिया पाँच सौ रुपया देता था। उसी के पल्ले बाँध देते। मुन्नी का जीवन भी सुधर जाता और हम भी—

भिखारिन—तुम क्या करते उन पाँच सौ रुपयो से ?

अन्धा भिखारी—उन पाँच सौ रुपयों से मैं फिर एक जमीन का टुकडा मोल ले लेता, गाय रखता और भेड़-बकरियाँ, मेरा एक छोटा-सा सुन्दर घर होता, कच्ची मिट्टी का बना हुआ, खड़िया मिट्टी से पुता हुआ। मुन्नी की माँ, तुझे क्या मालूम कि भिखा-

रियों की टोली में मिलने से पहले मैं एक किसान था।

भिखारिन—मुझे मालूम है, तुम ऐसी बातें मुझे कई बार सुना चुके हो।

अन्धा भिखारी—तुम एक बूढे अन्धे की बातों का विश्वास क्यों करोगी। लेकिन मुन्नी की माँ मैंने भी अच्छे दिन देखे हैं। जहाँ मैं रहता था वहाँ चारों ओर सुन्दर-सुन्दर खेत थे, खेतों से परे पहाड। एक उजली-उजली नदी, धान के खेतों में मीठे-मीठे गीत गाती हुई बहती थी। उस नदी के साथ चलते-चलते मैं अपना भेड़-बकरियों के रेवड़ को चरी में ले जाया करता था, जहाँ लम्बी-लम्बी दूब थी और बनफ्शे के फूल और खट्टे अनारों के जंगल और—

भिखारिन—और फिर तुम्हारा बाप मर गया, और तुम्हारे बाप को गाँव के बनिये का बहुत-सा कर्जा देना था, और बनिये ने तुम्हारी जमीन कुर्क करवा ली, और तुम होते-होते एक भिखमंगे बन गए, और फिर तुम हमारी टोली में आ मिले—मैं यह सब बातें अच्छी तरह जानती हूँ। इन्हें बार-बार सुनाने से तुम्हें क्या मिलता है? मैं अच्छी तरह जानती हूँ कि तुम सदा से एक भिखमंगे थे, सदा रहोगे, और एक भिखमंगे की मौत ही मरोगे। केवल यह बात सच है, बाकी सब झूठ। न तुम्हारा बाप किसान था, न मेरी माँ धनवान की बेटी थी। मुझे तो यह भी मालूम नहीं कि मेरी माँ कौन थी—एक खुतरी सी चुडैल की याद है जो मेरे सारे पैसे, जो मैं बाजार से लोगों के पीछे भाग-भागकर इकट्ठे किया करती थी, सब छीन लिया करती थी, और बहुत बार रात को भी मुझे भूखा रखा करती थी कि मैं कहीं मोटी न हो जाऊँ।

(दो मुसाफिर प्रवेश करते हैं)

भिखारिन—कौन है ?

अन्धा भिखारी—कौन है ?

कवि और जानी लगडा—मुसाफिर हैं—यात्रा, जरा आग ताप लें।

अन्धा भिखारी—मुसाफिर हो, तो सराय में जाओ, हम भिखारियो के पास क्या काम है ?

जानी लगडा—सराय के अन्दर जाने की हैसियत होती, तो तुमसे ही बातें क्यों करते।

अन्धा भिखारी—तुम कौन हो ?

जानी लगडा—मेरा नाम जानी लगडा है। पहले मैं नूरपुर में भीख माँगता था, पर वहा पुलिस वालों ने तग कर रखा है। बेचारे भिखारियो की हर रोज पेशी, हर रोज बुलावा। यह मेरी टाग लगड़ी थी, इस पर दो-चार गले-सड़े पुराने नासूर भी हैं। मजे स बैठे-बिठाए रोटी मिल जाती थी, लेकिन बुरा हो इन पुलिस वालों का—

अन्धा भिखारी—और तुम्हारे साथ यह दूसरा साथी कौन है ?

जानी लगडा—यह इसी से पूछ लो।

कवि—मैं · मैं कवि हूँ।

अन्धा भिखारी—कवि क्या होता है ? भई, बड़े-बड़े भिखमगे देखे—भाति-भाति के भिखारी, लेकिन इस प्रकार का भिखारी आज ही सुनने में आया।

जानी लगडा—अरे बाबा, यह कवि कवित्त बनाता है—कवित्त, और गाँव गाँव सुनाकर अपना पेट पालता है।

अन्धा भिखारी—हुँ। हाँ, तो भाट कहो ना, कहो कि मैं भाट हूँ—कवि ! अजब नाम ढूँढा है इसने भी !

जानी लगडा—यह रास्ते में मुझे मिल गया था। मैंने कहा सफर में दो हों तो रास्ता आसानी से कट जाता है, इसलिए इसे साथ

लेता आया। बाबा, तुम तो बड़े मजे में हो। यह बुढ़िया कौन है।

अन्धा भिखारी—यह मेरी बीबी है।

(पद-ध्वनि)

और यह मेरी मुन्नी आ रही है—मेरी बेटी। मुन्नी, यह जानी लगड़ा है और यह कवि है—कवित्त बनाता है, कवित्त। बीबी ने खिड़की खोली ? हाँ तो जल्दी से खाना दे मुझे।

मुन्नी—लेकिन बीबी कहती है कि अभी खाने के बाद मिलेगा। आज सराय में मुसाफिरों की बड़ी भीड़ है।

अन्धा भिखारी—तो कुछ थोड़ा सा ही उसने दे दिया होता—मैं तो भूख से मरा जा रहा हूँ।

कवि—एक मकई का भुट्टा है—भाई, इसे भूनकर खा लो।

अन्धा भिखारी—किधर है, किधर है, कहाँ है ? मुन्नी बेटा, जरा इसे आग पर भून डाल। ओह ! कितनी सरदी हो रही है आज ! इस गरम गुदड़ी मे भी जान निकली जा रही है कौन है ? किसी अमीर की गाडी आकर रुकी है। मुन्नी, जरा भाग-कर जाइयो।

जानी लगड़ा—मैं भी चलता हूँ तुम्हारे साथ। शायद एक-दो छदाम मुझ भी मिल जाए। मुन्नी, जरा मुझे सहारा देना—ओह !

(सराय के दरवाजे पर आकर घोड़ागाड़ी रुकती है)

पहला शिकारी—ओह, यार आज तो थककर चूर हो गए।

पहले शिकारी की पत्नी—यह तो कोई बहुत घटिया-सी सराय मालूम देती है। जरा मुझे सहारा देना—Thank you

दूसरे शिकारी की पत्नी—और भई, हमें तो बहुत भूख लगी है—जान निकली जा रही है—और फिर यह गज़ब की सर्दी। शुक्र करेंगे जब कल घर पहुँचेंगे।

दूसरा शिकारी—शिकार मे मर्दों के साथ आना भी तो कोई हँसी-खेल नहीं।

दूसरे शिकारी की पत्नी—शिकार मे मर्दों के साथ आना भी तो कोई हसी-खेल नहीं। देख ली हमने आज तुम्हारी बहादुरी—
Oh ! how brave you are my courageous knight !

मुन्नी—साहब एक पैसा, मेम साहब की जेब बनी रहे—एक पैसा मिल जाय।

जानी लगडा—गरीब अपाहज लगडे पर दया करो रे बाबा !

तीसरा शिकारी—ओह, डैम—यह कमबख्त हर जगह मौजूद हैं। अब किसे खयाल था कि इस out of the way सराय में भी ऐसे प्राणी मगज चाटने के लिए मौजूद होंगे।

मुन्नी—मेम-साहबों की जोड़ी बनी रहे, साहब का भाग्य ऊँचा हो, मेम साहब जी, आपके घर एक सुन्दर प्यारा-प्यारा बच्चा

पहले और दूसरे शिकारी की पत्नियां—आह, How indecent ! Hush, hush ! चलो, जल्दी अन्दर चले, नहीं तो ये भिख-मंगे हमारी जान खा जायेंगे।

(सराय के भीतर प्रवेश करती है)

पहला शिकारी—हॉ, आप चलिए, हम जरा सामान उतरवा लें—भई, ह्विस्की किधर है ?

तीसरा शिकारी—carrier में। फिक्र न करो, इसे मैं कैसे भूल सकता हूँ ?

मुन्नी—कुछ मिल जाय, हुजूर !

दूसरा शिकारी—बैरा, इन्हें कुछ देना।

(बैरा मुन्नी को एक दुअन्नी देता है)

सराय का मालिक—आइये, आइये हुजूर, अन्दर पधारिए।

पहला शिकारी—ओह, तुम इस सराय का मालिक है ?

जानी लंगड़ा—हुजूर का भाग्य ऊँचा हो। इस गरीब अपाहज लंगड़े को भी कुछ मिल जाय !

पहला शिकारी—ओह, बैरा, जल्दी से इस ब्लडी-बगर को कुछ देकर टालो—और, तुम इस सराय का मालिक है और दरवाजे पर भिखमगों को बिठाए रखता है ?

दूसरा शिकारी—मुसाफिरों को दोनों तरह से लूटता है—अन्दर भी और बाहर भी।

सराय का मालिक—हुजूर, अन्दर पधारिए। सराय के बाहर की जमीन का मालिक मै नहीं हूँ। अन्दर पधारिए हुजूर !

मुन्नी—साहब जी, आप भी—

तीसरा शिकारी—अरे यार, यह भिखारी की लड़की तो मुझे खासी अच्छी मालूम होती है, भई—तुम्हारा क्या खयाल है इस बारे में ....

दूसरा शिकारी—श्श ! बड़े बेहूदा हो तुम। बैरा, सब सामान ठीक है ?

पहला शिकारी—चलो भई अन्दर चलें। यहाँ खड़े-खड़े तो खून भी जम जायगा।

सराय का मालिक—अन्दर पधारिये, हुजूर।

मुन्नी—साहब जी, आप भी एक दुअन्नी—

(साहब लोग दरवाजे के अन्दर चले जाते हैं।)

बैरा—भागो, भागो—यहाँ कितनी देर से खड़ी चिल्ला रही है, मस्टंडी कहीं की !

[FADE OUT]

अन्धा भिखारी—कुछ मिला ?

जानी लंगड़ा—एक इकन्नी।

मुन्नी—और एक दुअन्नी मुझे भी।

जानी लगडा—जवान औरतों को लोग यों भी अधिक भीख दे देते है, और तुम्हारी बेटी तो—

अन्धा भिखारी—हाँ, एक बनिया इसके पाँच सौ देता था, लेकिन मुन्नी की माँ ने—

जानी लंगडा—मुन्नी की माँ ने अकल से काम लिया। अगर तुम भी अक्ल से काम लो तो यह लड़की तुम्हारे जीवन-भर के लिए रोटी का बन्दोबस्त कर सकती है। क्यो कवि जी, तुम्हारा क्या खयाल है?

(अन्तर)

जानी लंगडा—कवि जी!

कवि—हैं, क्या कहा? क्षमा करना, मैंने सुना नहीं।

जानी लगडा—ही, ही, ही—अच्छा हुआ, तुमने सुना नहीं। अब यह बताओ, क्या तुम कोई नया कवित्त बना रहे थे।

कवि—हाँ, एक नया कवित्त ही था।

जानी लगडा—जरा सुनाओ तो—और इस सारगी को कन्धे पर से उतारो।

[गाना]

मैं हूँ एक भिखारी, मेरा जीवन है बेमोल,
फैली-फैली धरती पर मैं फिरता हूँ आवारा।
न मैं किसी का प्रेमी हूँ, न कोई मेरा प्यारा,
देखता हूँ जब घायल आहें, या नैनों की धारा।
सूने गाने गाता है मन, होकर डावाडोल,
मैं हूँ एक भिखारी, मेरा जीवन है बेमोल।
मेरी तरह ये गीत है मेरे नगे, भूख के मारे,
मेरी तरह ये गीत हैं मेरे आवारा बेचारे,

दिन को फिरते हैं ये दर-दर, रात को गिनते तारे।
दुनिया वाले इनकी खातिर प्रीत का मन्दिर खोल,
मैं हूँ एक भिखारी, मेरा जीवन है बेमोल।

कवि—तुम क्यों रो रहे हो, बाबा ?

अन्धा भिखारी—मुझे अपने सुख के दिन याद आ गए। वे धान के प्यारे-प्यारे खेत—वह बहती हुई नदी का साफ-सुथरा पानी। वह चरी, जहाँ मैं अपना रेवड़ चराया करता था। मेरी माँ, जो मुझे लोरियाँ दिया करती थी। मेरा बाप, जो मुझे कन्धे पर बिठाकर नगरी के बाजार में सैर कराने के लिए लेजाया करता था !

भिखारिन—झूठ है, यह बिलकुल झूठ है ! मैंने इसी नगरी के बाजार मे इसे भीख मागते हुए देखा है। किसान का बेटा ! ऊँह ! रहना सराय के बाहर, और स्वप्न देखने महलों के !

कवि—हाँ, हाँ, तुम सच कहती हो, हम सराय के बाहर रहने वाले प्राणी है—कुत्ते और भिखारी, जो मुसाफिरों का बचा-खुचा खाना खाकर अपना पेट भरते हैं, और कई बार तो पेट भी नहीं भर सकते। हमें ऐसे सुनहले स्वप्न नहीं देखने चाहिएँ—कभी नहीं देखने चाहियें।

काना लंगडा—अरे भाई, इन बातों के सोचने से क्या होता है ? अपने राम ने तो बस यह सोच रखा है कि जियो भिखारी, और मरो भिखारी। सच तो यह है कि यह पेशा कोई इतना बुरा नहीं। बैठे-बिठाए रोटी मिल जाती है, लोग दो चार गालियाँ ही दे देते हैं ना—लेकिन सच पूछो तो गालियाँ किस पेशे मे नहीं ? हमने बड़े बड़े लोगों को देखा है कि गालियाँ खाते हैं और चूँ नहीं करते। भई, अपने राम ने तो

बस यही पेशा पसन्द किया है।

(अन्तर)

मुन्नी—कवि, क्या तुम्हारे सभी कवित्त ऐसे होते हैं?

कवि—क्या मतलब है तुम्हारा, मुन्नी?

मुन्नी—तुम्हारा गीत बहुत बुरा था। उसने बाबा को रुला दिया और मुझे भी।

कवि—तुम भी?

मुन्नी—हाँ, मेरी आँखों में भी आँसू आ गए।

कवि—मुन्नी, मेरे पास आँसुओं का एक खजाना है। उसे मैंने धरती के भिन्न-भिन्न कोनो से चुन-चुनकर इकट्ठा किया है। इन आँसुओं में मानव-जाति की कहानी है। क्या तुमने कभी इन गोल-गोल मोटे-मोटे आसुओं के अन्दर झाककर देखा है? इनमें मीलों तक लाल-लाल अगारों के मैदान है, और लाखों ज्वालाएँ अपनी भयानक जुबाने फैलाए हुए आकाश की ओर बढ रही हैं। उनमें घायलों का हाहाकार है और सुकुमार बालकों और विधवाओं का रुदन। उन आसुओं के क्षितिज पर सदा काली घटा छाई रहती है, जिसमें कभी-कभी बिजली की ऐसी भयानक कोंध लहराती है कि बड़े-बडे वीरों के दिल दहल जाते हैं।

मुन्नी—हाय, तुमने तो मुझे डरा दिया।

कवि—परन्तु इन आसुओं के पीछे कभी-कभी सात रंगो वाले मनोहर इन्द्रधनुष का सुकोमल झूला भी दीख जाता है। बस एक ही क्षण के लिए, फिर वह उसी काली घटा में लुप्त हो जाता है और लाखों ज्वालाओं की लाल लाल नुकीली जुबानें आकाश से बातें करने लगती हैं।

मुन्नी—मैं आज तक किसी झूले पर नहीं बैठी। कवि, क्या मैं इस

सात रंगों वाले झूले पर बैठ सकती हूँ ? बस एक क्षण-भर के लिए ही।

कवि—तुम बड़ी भोली हो मुन्नी। अभी तक किसी मनुष्य ने इस इन्द्रधनुष को नहीं छूआ है। छूना तो क्या, बहुतों ने तो इसे देखा भी नहीं है। मैंने भी इसे कभी-कभी ही देखा है। यह इन्द्रधनुष हर-एक मनुष्य के आंसुओं मे नहीं झिलमिलाता। हाँ, जब मैं गीत गाता हूँ और मेरे गीत सुनकर किसी अबोध बालक की आंखों में आंसू छलकने लगते है, तब मैं इस इन्द्रधनुष को एक क्षण के लिए देख लेता हूँ। यदि यह इन्द्र-धनुष हर-एक आँसू मे दिखाई दे तो नारकीय ज्वालाओं की ये लपटें सदा के लिए शान्त हो जायँ।

मुन्नी—तो फिर क्या हो, कवि ? तुम तो बडे अजीब आदमी हो।

कवि—फिर क्या होगा मुन्नी ? फिर वह होगा जो तुम्हारी आँखों ने कभी नहीं देखा। जिस खिड़की के खुलने की आशा तुम हर समय करती रहती हो वह खिड़की सदा के लिए खुल जाएगी।

मुन्नी—तो क्या तुम इसीलिए धरती के भिन्न-भिन्न कोनो से आँसू जमा करते रहते हो ?

कवि—हाँ।

मुन्नी—बापू, बापू, यह मुसाफिर कहता है कि मैं धरती के भिन्न-भिन्न कोनो से आँसू जमा करता हूँ ताकि हमारी यह सराय वाली खिड़की सदा खुली रहे।

(जानी लगडा, मुन्नी के मां-बाप और मुन्नी खूब हंसते है।)

जानी लगडा—यह कवित्त बनाने वाले सभी पागल होते हैं।

(हवा का तेज झोंका—दूर जगल में गीदड़ों के बोलने की आवाज)

ओह, यह हवा कितनी ठडी और बर्फीली है। बेचारे आदमियों पर तो सकट है ही, जगल में गीदड़ तक सर्दी से ठिठुरते हुए चिल्ला रहे हैं।

अन्धा—क्या तुमने वह कहानी नहीं सुनी—एक था राजा, उसने जब सर्दी के दिनों में गीदड़ों को यों चिल्लाते सुना तो अपने मन्त्री से पूछा—यह क्या कोलाहल है? मन्त्री ने कहा कि महाराज इन गीदड़ों को सर्दी लग रही है। महाराज ने हुक्म दिया कि तुरन्त ही इन गीदड़ों को कम्बल और लिहाफ मुफ्त बाँट दो।

(कवि हँसता है)

अन्धा (क्रोध से)—क्यों हँसते हो, कवि ?

कवि—मैं पूछता हूँ क्या उस राजा के शहर में कोई भिखारी न था ?

(हँसता है)

अन्धा भिखारी—भिखारी क्यो न होंगे? यह कवि कैसी बातें करता है? भला जहाँ राजा होगा वहाँ भिखारी न होंगे? पर इस बात का मेरी कहानी से क्या मेल? मैं कहानी सुना रहा हूँ और यह बीच में टोक देता है, बिना बात। यह कैसा आदमी है तुम्हारा मित्र—जानी ?

जानी लंगडा—माफ करो भई इसे, तुम जानते ही हो कि ये कवित्त बनाने वाले इसी तरह बेसुरी बातें किया करते हैं।

मुन्नी की मां—गीदड़ों की कहानी से मुझे एक बात याद आ गई। एक दिन मैं सड़क पर बैठी भीख माँग रही थी और कह रही थी—"कोई रोटी, कोई पैसा, भिखारिन भूखी है।" इतने में मेरे पास से एक सुन्दर स्त्री निकली। उसके कपड़े रेशम के थे और सिर से पाँव तक वह गहनों से लदी हुई थी। उसके साथ एक बहुत ही प्यारी-प्यारी नन्हीं लड़की थी। मैंने उन्हें

देखकर और भी दर्दभरी आवाज मे कहा—"कोई रोटी, कोई पैसा, भिखारिन भूखी है!" इस पर वह ठिठककर खड़ी हो गई और उसने अपने बटुए में से एक पैसा निकाल कर मेरी हथेली पर रखा। नन्हीं लड़की कहने लगी, "माँ, यह भूखी है।" माँ ने कहा—"हा बेटा, यह भिखारिन है, गरीब है, भूखी है।' नन्ही लडकी बोली—"मा यह भूखी है तो बिस्कुट क्यों नहीं खाती ?" बिस्कुट! सुना तुमने, मुन्नी के बापू, बिस्कुट !!

(खोखली हँसी हँसती है)

उसकी मा ने उसे एक जोर का थप्पड़ लगाया और फिर अपनी रोती हुई लड़की को लेकर आगे निकल गई।

(फीकी-सी हँसी हँसती है।)

अन्धा भिखारी—अभी मेरी कहानी तो पूरी हुई नहीं कि तुम लोगो ने बीच में—

बीबी (दूर से पुकारती है)—मुन्नो, मुन्नी, मुन्नी बिटिया !

अन्धा भिखारी—खिडकी खुल गई है, मुन्नी खिड़की खुल गई है। बीबी तुझे बुला रही है, भागकर जा।

बीबी—मुन्नी, मुन्नी !

जानी लगडा—बीबी खिड़की पर नहीं है, वह तो सराय के दरवाजे पर खडी पुकार रही है।

भिखारिन—मुन्नी, जा भागकर !

मुन्नी—आई, बीबी जी !

(दौडती हुई जाती है)

मुन्नी—बीबी, अब खाना दोगी ?

बीबी—हा, हा, चुडैल, तुझे खाना भी दूँगी और बहुत सी अच्छी-अच्छी चीजें भी दूँगी। चल, सराय के अन्दर चल। सराय

के मालिक तुझे बुला रहे हैं।

मुन्नी—अहाहा! (ताली बजाकर) कहाँ हैं सराय के मालिक?

(सराय का दरवाजा बन्द हो जाता है)

भिखारिन—मुन्नी सराय के अन्दर चली गई?

जानी लगड़ा—बीबी मुन्नी को लेकर सराय के अन्दर चली गई। सराय का दरवाजा बन्द हो गया है।

अन्धा भिखारी—सराय के अन्दर चली गई? क्या कह रहे हो जानी? मेरी मुन्नी तो आज तक कभी सराय अन्दर के नहीं गई थी · · मुन्नी कैसे सराय के अन्दर ?""मुन्नी—मुन्नी—मुन्नी—

कवि—आखिर एक-न-एक दिन उसे सराय के अन्दर जाना ही था।

अन्धा भिखारी—नहीं, मेरी बेटी······ ·

कवि—और सराय की दहलीज ने उसके जीवन के दो टुकड़े कर दिये, सराय के अन्दर और सराय के बाहर। और अब मुन्नी की लाज इसी सराय की दहलीज के इर्दगिर्द आवारा होकर भटका करेगी। तनिक आग तेज कर दो, जानी! मेरे गीत इस बर्फीली रात मे शीत से ठिठुरे जा रहे है। ये उन आवारा गीदड़ों-जैसे हैं जिन्हे सर्दियों में कोई कम्बल नहीं देता। ये उन भिखारियों-जैसे है, जिनकी फटी-पुरानी गुदड़ी मे से हवा बर्फ के काटे बनकर चुभती है। मेरे गीत भूखे, नगे और प्यासे हं। इन्हें कोई बिस्कुट नहीं देता। मेरे गीत ससार क गले-सड़े घाव हैं। इन रिसते घावों पर आज तक किसी ने फाहा नहीं रखा।

(सारगी बजाने लगता है)

जानी लगड़ा—हा-हा-हा ·· दिमाग चल गया है सर्दी से

बेचारे का।

[कवि गीत गाता है]

मेरी तरह ये गीत है मेरे नगे, भूख के मारे,
मेरी तरह ये गीत है मेरे आवारा बेचारे,
दिन को फिरते है ये दर-दर, रात को गिनते तारे।
दुनिया वाले इनकी खातिर प्रीत का मन्दिर खोल !
मैं हूँ एक भिखारी, मेरा जीवन है बेमोल !

× × ×

इनकी खातिर प्रीत का मन्दिर खोल, ओ दुनिया वाले,
उसमें फिर इक सुन्दर सी आशा की जोत जगा ले,
तन की दौलत को ठुकरा दे, मन की दौलत पा ले।
मन की दोलत ढूंढने वाले सुन ले मेरे बोल,
मैं हूँ एक भिखारी, मेरा जीवन है बेमोल !

(अन्धा भिखारी अपनी गुदडी समेटने लगता है।)

भिखारिन—कहाँ जा रहे हो, मुन्नी के बापू ?

अन्धा—मैं अपनी मुन्नी को वापस बुलाने जा रहा हूँ। मैं सराय का दरवाजा खटखटाऊँगा, शोर-गुल मचाऊँगा, चिल्लाऊँगा, गालिया दूँगा। समझा क्या है इन्होंने। मैं भी कभी किसान था, मेरा भी घर था, बैलों की जोड़ी थी, सुन्दर खेत थे मेरी मुन्नी—

जानी लंगडा—चलो, चलो, मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ, आओ कवि जी।

(धीरे-धीरे चलते हैं)

जानी लगडा—दरवाजा खटखटाओ।

(खट-खट)

जानी लगडा—कोई नहीं बोलता।

(खट-खट)

जानी लगडा—सराय मे खामोशी है।

(खट-खट)

जानी लगड़ा—सब सो रहे हैं।

(खट-खट)

कवि—(व्यग्य ले) मुन्नी भी सो रही होगी!

अन्धा—(चिल्लाकर) दरवाजा खोल दो, दरवाजा खोल दो, सराय के बदमाश कुत्तो! दरवाजा खोल दो। मेरी मुन्नी को मेरे हवाले कर दो, मेरी बेटी को मेरे हवाले कर दो! मैं मुन्नी का बाप हूँ। दरवाजा खोल दो, दरवाज़ा खोल दो! (खट, खट, खट) हाय, जालिमो, शैतान के नारकी कीड़ो! मेरी पवित्र मुन्नी को मुझे वापस दे दो। उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? तुमने मुझसे मेरा घर छीना, मेरे सुनहले खेत छीने, मेरे सुन्दर बैलों की जोड़ी मेरी आखें भी तुमने मुझसे छीन लीं। अब मैं अन्धा हूँ—तुम्हारे दरवाजे का भिखारी। आह! दरवाजा खोल दो। (खट-खट) खोल दो। जालिमो, एक अन्धे भिखारी पर दया करो। उसके बुढापे का सहारा, उसके अन्धे जीवन की जोत उसे वापस दे दो! हा, मुझे मेरी मुन्नी वापस कर दो। मैं अब तुमसे कभी कुछ नहीं मॉगूँगा। चुपचाप यहॉ से चला जाऊँगा, और जगल के गीदडो के साथ रह लूँगा। चुपचाप चला जाऊगा, चुपचाप!

(खट-खट)

(हल्के-हल्के सिसकियाँ लेता है)

कवि—(दुःख भरे मन से) मै जानता हूँ कि यह सराय कभी न बोलेगी। सराय का हर सास बर्फ की भाति शीतल है। उसकी

छाती पत्थर की है—उन पत्थरों की जो हर दिन तुम्हारे नगे पैरों से टकराते है और उनमे घाव पैदा कर देते हैं। ये पत्थर, जिनसे इस सराय की दीवारें बनी हैं—केवल दीवारें ही नहीं, इसका हृदय भी पत्थर ही का है। इस हृदय में धड़कन पैदा नही होती, और जहा धड़कन न हो वहा आवाज भी नहीं होती। इसीलिए तो सराय चुप है। लेकिन घबराओ नहीं, इस मौन सराय में जिस शक्ति ने मुन्नी को निगल लिया है, वह समय आने पर अपने आप ही उसे उगलकर बाहर फेंक देगी। आओ, अपने अलाव पर चलें।

जानी लगडा—हा, हा, आओ, अलाव की ओर चलें, बेचारी बुढिया अकेली रो रही होगी।

[धीरे-धीरे अलाव की तरफ मुड जाते हैं]

[FADE OUT]

[नगरी का घण्टा एक बजाता है। अँधेरा चारों तरफ गहरा है]

कवि—एक। (अन्तर)

(नगरी का घण्टा दो बजाता है)

कवि—दो। (अन्तर)

(घण्टा तीन बजाता है)

कवि—तीन।

(खर्राटों की धीमी आवाजें)

कवि—सो गए, सब सो गए। अन्धा, लगड़ा, भिखारिन—सब सो गए। अलाव की तपती हुई लाल-लाल लपटें भी जाग-जाग-कर सो गईं। अब काली, बर्फीली रात है और हवा के तेज झोंके। परन्तु ये तेज झोंके सराय के पाषाण-जैसे वक्ष को नहीं चीर सकते। जिस तूफान की तू बाट जोह रहा है, वह

यहा कभी नही आएगा। इस लगड़े को अपने घावो से प्रेम है, इस भिखारी को अपनी भूख से, और तू, तू अपनी इस बेकार सारगी के बोझ को कधे पर उठाए इस बुझते हुए अलाव के किनार क्यो बैठा है? उठ, चल, पगडडी का पुराना मार्ग तुझे बुला रहा है। तू राही है, प्रेमी नही, तू मुसाफिर है, मुहब्बत करने वाला नहीं।

(पैरो की आहट)

कवि—कौन है?

मुन्नी—मैं हूँ मुन्नी—मुन् नी मुन् नी सराय की रानी है—उसने कहा था।

कवि—किसने कहा था? ये तेरे पैर क्यों लड़खड़ा रहे है? ये तेरे-तेरे मुँह से कैसी बू आ रही है?

मुन्नी—बू आ रही है ही-ही-ही, बू या खुशबू? तुम कवि होकर बू और खुशबू मे भी पहचान नही कर सकते—अहा हा-हा!

जानी लगडा—(जागकर) कौन?

अन्धा—यह मुन्नी की आवाज़ थी।

भिखारिन—मुन्नी, मेरी बिटिया, तू इतनी देर कहा रही?

मुन्नी—स स सराय के अन्दर, और अब सराय के बाहर हूँ। आज मै बहुत खुश हूँ। आज मैंने अगूरों का रस पिया है। रेशम के कपड़े पहने हे। स्वादिष्ट और मीठे खाने खाय है। तुम्हारे लिए भी लाई हूँ, लो—लो—इस रूमाल मे सब-कुछ बँधा है, और यह—यह—यह भी लो।

भिखारिन—यह क्या?

जानी—नोट! दस, बीस, तीस, चालीस! वाह, मेरे यार, यह लौंडिया तो बड़ी चालाक हे!

भिखारिन—चालीस ? वह बनिया तो पाच सौ देता था।

अन्धा—(चिल्लाकर) मुन्नी ! मुन्नी !! जरा मेरे पास आ मेरी बेटी !!!

मुन्नी—क्या बात है, बापू ?

अन्धा—और पास आ, मेरी बेटी !

(अन्धा मुन्नी का गला दबाने की कोशिश करता है, मुन्नी चिल्लाती है, कवि और जानी उन दोनों को अलग कर देते हैं।)

मुन्नी—क्या बात है, बाप 'क्या बात है ? तुम तो मुझे (लम्बी-लम्बी साँसें लेकर) जान ही से मारे डालते थे, मैंने क्या कोई बुरी बात की है ? मैं तुम्हारे लिए खाना लाई हूँ। अपने लिए ये सुन्दर कपड़े। देखो, कवि, ये मेरे शरीर पर कैसे मजते हैं—अच्छे लगते हैं न ? वह बहुत ही अच्छा आदमी है—मुझसे प्रेम करता है। कहता था—जब मैंने तुम्हें सराय के बाहर दुअन्नी दी थी, उसी समय से मैं तुमसे प्रेम करने लगा था। उसकी बातें बहुत ही रसीली थीं, उसने मुझे बहुत प्यार किया। कवि, वह कहता है, वह कहता है—मैं तुमसे शादी कर लूँगा। वह कल अपने घर जाएगा। फिर वहा से वह सराय के मालिक को चिट्ठी लिखेगा और फिर मेरे लिए एक सुन्दर चार घोड़ों वाली गाड़ी आयगी, और मैं उसमें बैठकर अपने प्रीतम के घर जाऊँगी। मा, तुम्हें याद है न—एक बार एक भिखारी ने मेरा हाथ देखकर तुमसे कहा था कि यह लड़की बड़ी होकर रानी बनेगी, भिखारिन से रानी। मा, वह बहुत ही धनवान है—मीलों तक उसके खेत फैले हुए हैं, उसके पास बैलों की अनगिनत जोड़िया हैं, उसका घर लाल ईंटों का बना हुआ है, और उसके चारों ओर एक बहुत बड़ा बाग है।

मा, वह बहुत ही अच्छा आदमी है—मैंने उससे कहा कि मैं अपनी मा और बापू को भी साथ ले चलूँगी। तो उसने कहा यह तो बहुत ही अच्छी बात है, मैं इन दोनो के लिए एक अलग मकान बनवा दूँगा और तुम्हारे बापू के लिए खेत और बैलों की जोड़ी भी मोल ले दूँगा। तुम मेरे साथ चलोगे न, बापू! मा, तुम भी। अब हम भिखारी नहीं रहेंगे, घर-घर भीख नहीं मागेंगे, बीबी की गालियाँ नहीं सुनेंगे, सराय के बाहर सर्दी में ठिठुरते हुए अलाव की धीमी आग नहीं तापेंगे—हाँ, जानी लगड़े को भी साथ लेते चलेंगे, मैं उससे कह दूँगी, वह बड़ा अच्छा आदमी है। कवि, तुम भी हमारे साथ चलना, तुम्हारे मीठे गीत सुनकर उसकी आँखों में आँसू आ जायँगे। क्यों ठीक है न—ठीक है न बापू?—मा—जानी—तुम सब चुप क्यों हो! कवि, यह क्या बात है—तुम भी नहीं बोलते! तुम भी नहीं बोलते · (धीमी आवाज में सिसकियाँ लेते हुए) तुम भी नहीं बोलते!

(सिसकियाँ लेती है)

कवि—रो मत, मुन्नी, आज तुम वास्तव मे इस अँधियारी काली रात की राजकुमारी हो, इस सराय की रानी हो, तुम्हारे वस्त्र रेशम के हैं—तुम्हारे बालों में गुलाब के फूल टँके हुए है—तुम्हार अधरों पर तुम्हारे प्रीतम के चुम्बन चमक रहे हैं। आज की रात तुमने सात रगों वाला इन्द्रधनुष देखा है, आज की रात वह तुम्हारा पति है, आज की रात वह तुम्हें अपनी चार घोड़ों वाली गाड़ी में बिठाकर, अपनी पत्नी बनाकर अपने घर ले गया है, आज की रात उसने तुम्हें अपने हीरों से जड़े हुए स्वर्ण-महल की सैर कराई है, तुम्हारी कमर मे हाथ डाले तुम्हें अपने विशाल उद्यानों में फिराया है। रो मत, मुन्नी—इन

ख़ुशी के आँसुओं को सँभालकर रख, यह आँसू तुझे फिर कभी प्राप्त न होंगे। आज की रात तूने क्या खोया है और क्या पाया है, यह कदाचित् तू इस समय नहीं जान सकती। कल सवेरे जब वह मुसाफिर अपनी चार घोड़ों वाली गाड़ी में सवार होकर अपने सोने के महल को लौट जायगा, उस समय तुझे मालूम होगा कि तू इस निर्दयी सराय की पथरीली दहलीज से ब्याही गई है, जिसकी चौखट पर माथा रगड़ते-रगड़ते तेरा बाप अन्धा हो चुका है। रो मत, मुन्नी, रोने के लिए सारा जीवन पड़ा है। कल तुझे मालूम होगा कि वह इन्द्रधनुष लुप्त हो चुका है—वह सोने का का महल राख का ढेर हो गया है—वे विशाल उद्यान और खेत बजर और सुनसान हो गए हैं—उनमे तपते हुए रेत के बवंडर चक्कर काट रहे हैं, और भूत-प्रेत चीत्कार कर रहे हैं—और तू अपने चीथड़ों में लिपटी हुई हाथ फैलाए भीख माँगती फिरती है—"कोई रोटी, कोई पैसा, भिखारिन हूँ ।"

मुन्नी—नहीं, नहीं, कवि, यह कैसे भयानक शब्द हैं। ऐसा कभी नहीं हो सकता—मैंने किसी का क्या बिगाड़ा है?

कवि—तेरा दुर्भाग्य यही है कि तूने अनन्त आनन्द और अपार सौन्दर्य के अलौकिक क्षण अपनी पवित्र, निष्कलंक आत्मा से निकालकर एक ऐसे आदमी को दान कर दिए हैं जो उनका मूल्य—उनका महत्त्व—नहीं जानता। इस मायावी संसार में कोई मनुष्य इनका मूल्य नहीं जानता। वे क्षण, जिनका बदला चाँद-सूरज की दुनियाओं के पास भी नहीं। परन्तु, मनुष्य अभी मनुष्य नहीं है। वह हर उस वस्तु को नष्ट-भ्रष्ट करता है जो सुन्दर है, पवित्र है, निष्कलंक है और हर उस वस्तु का पुजारी है जो उस पर अत्याचार करती है, उसकी

आत्मा को कुचलकर उसकी कोमल भावनाओं को रौंद डालती है।

जानी लंगड़ा—च-च—च्-च् ! बहक गया है बेचारा, दिमाग चल गया है इसका। चाँद और सूरज और लपटें और इन्द्रधनुष—भला इन बातों का मुन्नी के चालीस रुपयों से क्या सम्बन्ध, क्या जोड़ ? जा, भाई जा, बहुत मगज चाट लिया तूने। अब अगर सीधी तरह न जायगा तो जानी लंगड़ा तुझे अपनी लंगड़ी टाँग के करतब दिखायगा। मेरी लंगड़ी टाँग ऐसे अवसरों पर पर खूब चलती है। बड़ा आया है मुन्नी को समझाने वाला '' चल, जा, यहाँ से !

(कवि धीरे-धीरे पगडंडी की ओर पग बढ़ाता है)

मुन्नी—कवि, ठहरो !

(अन्तर)

मुझे अपने संग ले चलो।

कवि—नहीं, मैं अब नहीं ठहर सकता। परन्तु मैं तुम्हारे आँसू अपने साथ लिये जा रहा हूँ, मुन्नी ! प्रेम करना या घायल जीवनों पर फाहा रखना मेरा काम नहीं। मैं तो केवल धरती के आँसू इकट्ठे करता हूँ।

(चला जाता है)

[निस्तब्धता—फिर जंगल में गीदड़ों के बोलने की आवाज]

(परदा)

बदसूरत राजकुमारी

नाटक के पात्र

उदयसिंह—सिंहल द्वीप का राजकुमार

महाराणा उग्रसेन—दर्शन द्वीप के महाराज

महामन्त्री—दर्शन द्वीप के महामन्त्री

पाँचू—उदयसिंह का नौकर

सन्तरी—दर्शन द्वीप दरबार का सन्तरी

चन्द्रा—दर्शन द्वीप की राजकुमारी

महारानी—दर्शन द्वीप की महारानी

अप्सरा—चन्द्रा की दासी

बदसूरत राजकुमारी

(एक सघन वन में से गुजरकर राजकुमार उदयसिंह और नौकर पांचू घोड़े पर सवार दर्शन द्वीप की ओर जा रहे हैं)

उदयसिंह—पाँचू !

पांचू—जी सरकार।

उदयसिंह—मेरा नाम क्या है ?

पांचू—उदयसिंह महाराज।

उदयसिंह—मैं किस देश का राजकुमार हूँ !

पांचू—सिंहल द्वीप।

उदयसिंह—कहाँ जा रहा हूँ ?

पांचू—दर्शन द्वीप की राजधानी को।

उदयसिंह—क्यों जा रहा हूँ ?

पांचू—विवाह करने।

उदयसिंह—किस से ?

पांचू—दर्शन द्वीप की राजकुमारी चन्द्रा से।

उदयसिंह—बहुत खूब, घोड़ा आगे बढाओ। (गाना आरम्भ करता है) मैं हूं सिंहल द्वीप का राजकुमार ! (सहसा रुककर) पाँचू !

पांचू—जी सरकार !

उदयसिंह—क्या राजकुमारी चन्द्रा बहुत सुन्दर है ?

पांचू—जी सरकार, सुना है कि वह परियों से भी अधिक सुन्दर है—कम-से-कम राज्य पुरोहित तो यही कहता था।

उदयसिंह—तुम्हारा क्या विचार है ?
पांचू—जी मुझे तो अपनी पत्नी पसद है ।
उदयसिंह—पाँचू !
पांचू—जी सरकार ।
उदयसिंह—घोड़ा आगे बढाओ (पुन: गाना आरम्भ करता है—)
ऐ दर्शन द्वीप की राजकुमारी, ऐ दर्शन द्वीप की राजकुमारी !
(गाना बन्द कर देता है)
उदयसिंह—पांचू !
पांचू—जी सरकार !
उदयसिंह—क्या मै सुन्दर हूँ ?
पांचू—सूर्य की भाति ।
उदयसिंह—क्या मैं बहादुर हू ?
पांचू—शेर की भाति ।
उदयसिंह—क्या मैं बुद्धिमान् हूँ ?
पांचू—महामन्त्री की भाति ।
उदयसिंह—लेकिन, पांचू ?
पांचू—जी सरकार !
उदयसिंह—यदि राजकुमारी ने मुझे पसन्द न किया ?
पांचू—जी स कार !
उदयसिंह—यदि उसे मेरी सूरत पसन्द न आई ? यदि उसने मेरे मुख पर सूर्य के तेज स्थान पर रात्रि की कालिमा देखी ?
पांचू—जी सरका !
उदयसिंह—यदि उसने मुझमें सिंह की वीरता के स्थान प गीदड़ की कायरता देखी ?
पांचू—जी सरकार !
उदयसिंह—यदि उसने मेरी खोपड़ी में महामन्त्री की बुद्धि के स्थान

पर गधे की बुद्धि पाई ?

पाँचू—जी सरकार !

उदयसिंह—अपने घोड़े से उत क मेरे घोड़े पर बैठ जाओ। मैं तुम्हारे घोडे पर सवा होता हू।

पाँचू—जी स कार !

(दोनों आपस में घोड़े बदलते हैं)

उदयसिंह—अच्छा अब बताओ तुम कौन हो ?

पाँचू—जी सरकार !

उदयसिंह—जी सरका के बच्चे, अब तुम पाँचू नहीं, सिंहल द्वीप के राजकुमार उदयसिंह हो। तुम दर्शन द्वीप की राजकुमारी चन्द्रा से विवाह करने जा रहे हो—दर्शन द्वीप के वासियों का मन तुम्हारे रूप, तुम्हारी छवि और तुम्हारे सर्वांग सुन्दर शरीर को देख कर गद्गद् हो उठेगा और—परन्तु याद रखो तुम ाजकुमार उदयसिंह हो—केवल विवाह की रात्रि तक—उसके पश्चात्—

पाँचू— फिर पाँचू का पाँचू, सरकार !

उदयसिंह—ठीक है। तुममें हमारे महामन्त्री की सारी बुद्धिमत्ता कूट कर भरी है। खेद है कि आजकल के राजकुमार नौकर लगते हैं और नौकर राजकुमार।

पाँचू—जी सरकार।

उदयसिंह—खामोश, घोड़ा आगे ढाओ।

× × ×

(दर्शन द्वीप का राजमहल। महाराज सिंहासन पर सुशोभित हैं। सन्तरी प्रवेश करता है)

सन्तरी—महाराजाधिराज, श्री श्री एक सौ आठ उग्रसेन जी अग्निहोत्री महामान्य की सेवा मे महामत्री का प्रणाम ! महा-

मंत्री कुछ प्रार्थना करने का अवसर प्राप्त करने की आकांक्षा लेकर पधारे हैं।

महाराज—महामंत्री हमसे मिलना चाहते हैं? सीधी तरह बातें करो। इतने हेरफेर से क्यो बातें करते हो?

सन्तरी—महाराजाधिराज श्री श्री एक सौ आठ उग्रसेन जी अग्निहोत्री महामान्य की सेवा मे यह सेवक क्षमा-याचना करता है। बहुत पुराना सन्तरी है और सदा से इसी प्रकार की भाषा मे सम्बोधन करने का अभ्यस्त है। प्राणों की क्षमा माँगता है।

महाराज—अच्छा, अच्छा। जाओ महामंत्री को बुला लाओ।

(**विराम**)

क्या मुसीबत है—गधा, पाजी, नालायक़, गँवार!

महामन्त्री—(**प्रवेश करते हुए**) क्षमा महाराजाधिराज, आज आपके मुखारविंद से यह कैसे शब्द सुन रहा हूँ?

महाराज—हम गालिया दे रहे है।

महामंत्री—गालिया, गालियां? नहीं, नहीं।

महाराज—क्या मैं झूट बोल रहा हूं?

महामन्त्री—नहीं, नहीं झूट तो महाराज के दुश्मनों के लिए है। मेरा मतलब था कि महाराज आप जब गालिया भी देते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे मुखारविन्द से पुष्प-वर्षा हो रही है।

महाराज—अजब गधों से पाला पड़ा है। बताइये, क्या काम है आपको? मै इस समय कुछ विचार कर रहा था।

महामन्त्री—धन्य है, धन्य है विचार करने मे उत्तम और क्या कार्य हो सकता है? स्वयं मै भी विचार कर रहा था।

महाराज—किस विचार मे डूबे हुए थे?

महामंत्री—महाराज, सिंहल द्वीप की सबसे जटिल समस्या और घोर तम विपदा के सम्बन्ध मे,—

महाराज—तुम्हारा आशय हमारी पुत्री से है?

महामन्त्री—एँ···ऐ नहीं नहीं महाराज · मैं यह कह रहा था · मेरा मतलब यह था कि आज राजकुमार उदयसिंह यहा पहुँच जायेगे। वह सात समुद्र पार देशों का भ्रमण करके आ रहे हैं और जैसा कि मैंने सुना है उन्होंने. .

महाराज—(उत्तेजित होकर) उन्होंने राजकुमारी चन्द्रा के सम्बन्ध में अभी तक कुछ नहीं सुना?

महामन्त्री—नहीं महाराज यह बात नहीं है। बात यह हे महाराज कि .महाराज बात ऐसी है कि मैं ठीक प्रकार से नहीं बता सकता।

महाराज—तुम बताने का प्रयत्न करो, मैं समझने की चेष्टा करूँगा।

महामन्त्री—सेवक का आशय यह है कि कि राजकुमार उदयसिंह अपने मन मे यह आशा और विश्वास लेकर आये होंगे कि कि महाराजाधिराज दर्शनद्वीपपति श्री उग्रसेन जी अग्निहोत्री महाराज की सुपुत्री, सौभाग्यवती राजकुमारी रूप और गुणों मे भी राजकुमारियों जैसी मेरा मतलब है कि आप स्वय समझदार हैं ..

महाराज—हम समझ गए। तुम कहना चाहते हो कि हमारी बेटी सुन्दर नहीं—है ना?

महामन्त्री—ऐ हाँ . जी नहीं नहीं, मेरा मतलब था कि राजकुमारी का सौन्दर्य ऐसा अलौकिक, विचित्र, अद्‌भुत और सूक्ष्म अर्थात सामान्य दृष्टि से दिखाई न देने वाला .

महाराज—हाँ हाँ ठीक है। उसका सौन्दर्य किसी को दिखाई नहीं देता, मुझ को भी दिखाई नहीं देता, तुम को भी दिखाई नहीं देता, उन व्यक्तियो मे से किसी को दिखाई नहीं देता जिन्होंने राजकुमारी को देखा है। हद तो यह है कि हमारा राज-

चित्रकार भी इस सौन्दर्य को न देख सका । और जब मैंने राजकुमारी का चित्र देखकर उस अभागे को मृत्यु दण्ड दिया तो उसके अन्तिम शब्द थे—"महाराज, मैंने अपनी ओर से कोई कसर उठा न रखी थी।"

महामन्त्री—हा, हा, महाराज मै यह कहना तो भूल ही गया कि नया राज-चित्रकार आपकी वाटिका का चित्र बना रहा है—कहता है कि उसके चिकित्सक ने उसे आदेश दिया है कि वह केवल प्राकृतिक दृश्यों का चित्रण किया करे।

महाराज—उसका चिकित्सक बुद्धिमान जान पड़ता है।

महामन्त्री—जी हाँ, पर बड़े अचम्भे की बात है। समझ मे नहीं आता यह कैसे हुआ ?

महाराज—हुँ, कहा तुम्हारा यह मतलब तो नहा कि राजकुमारी की सूरत उसके पिता पर गई है।

महामन्त्री—बिल्कुल नहीं महाराज, तनिक भी नहीं। महाराज लेश-मात्र नहीं।

महाराज—समझदार प्रतीत होते हो। तुमसे पहले जो हमारा महामन्त्री था उसने एक बार इस विषय पर बहस की थी।

महामन्त्री—महाराज मै कई बार सोचता हूँ, उस महामंत्री का क्या हुआ ?

महाराज—चील कौवों का शिकार।

महामन्त्री—आह! बेचारा परन्तु महाराज यदि राजकुमारी बाहर से सुन्दर नहीं तो क्या हुआ ? उनका अन्तर मेरा मतलब है ससार जानता है कि राजकुमारी का चरित्र और उनके गुण दिन के सूर्य की भाति उज्ज्वल और रात्रि की ओस की भाति पवित्र है। उनका हृदय तो अति सुन्दर है।

महाराज—कैसी बातें करते हो मन्त्री जी! आजकल के राजकुमार

यह नहीं देखते कि अमुक राजकुमारी का हृदय कैसा है, उसके फेफड़ो की क्या दशा है? वे विश्वास कर लेते हैं कि यदि किसी लड़की की मुखाकृति सुन्दर है तो उस सुन्दर चेहरे के पीछे छिपा हुआ हृदय भी सुन्दर होगा। मन्त्री जी हृदय को तो चेहरे पर होना चाहिए था जहाँ उसे सब देख सके।

महामन्त्री—जी महाराज!

महाराज—इन समस्त बातो के होते हुए भी राजकुमारी चन्द्रा हमारे राज्य की सब से प्रिय और बहुमूल्य निधि है।

महामन्त्री—निस्सन्देह, निस्सन्देह। इसमें क्या सन्देह हो सकता है·· आपको और महारानी जी को छोड़कर वे हमारे राज्य की, मेरा मतलब है आपके राज्य की, सबसे प्रिय और बहुमूल्य निधि है।

(महारानी का प्रवेश)

महारानी—क्या गोलमाल हो रहा है? मैं भी तो सुनू कि किसकी बातें हो रही हे—वही मेरी बेटी का चर्चा होगा।

महाराज—वही तो एक चर्चा का विषय है।

महारानी—यह राजकुमार उदयसिंह आज यहाँ पहुँच रहे हैं। देखने मे कैसे हैं?

महामन्त्री—उन्हे अभी किसी ने नहीं देखा महारानी जी।

महारानी—आयु क्या होगी?

महामन्त्री—पच्चीस वर्ष।

महारानी—तब इन पच्चीस वर्षों मे उन्हें किसी न किसी ने अवश्य देखा होगा।

महामन्त्री—मेरा आशय यह था कि हमे उनके रूप-रग का कोई प्रामाणिक विवरण प्राप्त नहीं हो सका है। केवल इतना ज्ञात हुआ है कि राजकुमार उदयसिंह सिंहलद्वीप का उत्तराधिकारी है, सात समुद्र पार के देशों का भ्रमण करके लौट रहा है और

एक राजकुमार के समस्त गुणों से, जो आजकल के युग में स्थिति को देखते हुए ··

महारानी—मैं पूछती हूँ वह देखने में कैसा है? काना तो नहीं, लुजा या बहरा या इसी प्रकार का कोई और दोष जो बहुधा राजकुमारो में आजकल के युग में, स्थिति को देखते हुए

महामन्त्री—नहीं महारानी जी, इस सम्बन्ध में विश्वस्त सूत्रों से इस प्रकार की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई। इसके अतिरिक्त मुझे यह कहने मे तनिक सकोच नहीं कि राजकुमारी चन्द्रा का चरित्र दिन के सूर्य की भाति उज्ज्वल और रात्रि की ओस की भाति पवित्र है।

महारानी—इन बातों को बार-बार दोहराने से क्या लाभ? तुम्हें पता है पिछले स्वयवर में क्या हुआ था।

महामन्त्री—नहीं महारानी जी, मैं उन दिनो यहाँ मौजूद न था—समुद्र पार देशों का भ्रमण कर रहा था।

महारानी—हा, हा, उन दिनो वह दूसरा मूर्ख मौजूद था। हा तो मैं क्या कह रही थी महाराज?

महाराज—तुम राजकुमारी के पिछले यानी यदि ठीक गणित लगाया जाए तो आठवें स्वयवर की बातें कर रही थीं—आठवा स्वयवर था न वह, महामन्त्री?

महामन्त्री—हा महाराज, आप ठीक

महारानी—आठवा कैसे होगा? सातवा स्वयवर था वह। मुझे भली प्रकार याद है कि वह सातवा था, क्यों मंत्री?

महामन्त्री—आपने ठीक ही कहा महारानी जी।

महाराज—यदि हम दोनों ठीक हैं, तो गलत कौन है?

महामन्त्री—गणित, महाराज। गणित अवश्य गलत होगा। आप विचार कीजिए न, यदि एक राजकुमारी अपने ७ स्वयवर रचाए

और सातों विफल सिद्ध हों अर्थात् वहीं के वहीं पड़े रहें तो सात स्वयवर हुए न सब मिलाकर। परन्तु यदि इन पर सूद दर सूद लगाया जाए तो यही स्वयर एक वर्ष के भीतर-भीतर आठ हो जाते हैं। सात जमा एक बराबर आठ। आप जानते ही हैं कि दर्शन द्वीप मे स्वम्वरो पर भी सूद लगता है। वास्तव मे वे सात ही हैं परन्तु सूद लगा कर आठ अर्थात् सात आट, आठ सात।

महाराज—आह, यह बात! परन्तु ऐं, यह सूद कौन चुकाता है! क्या मेरी निजी सम्पत्ति? मेरी तलवार कहाँ है, मेरी तलवार कहाँ है?—सन्तरी!

महामन्त्री—नहीं महाराज, राजकीय कोष से। आठ क्या, यदि आठ हजार स्वयवर भी हों तो भी राजकीय कोष ही से सूद चुकाया जाएगा।

महाराज—तब तो ठीक है।

(सन्तरी का प्रवेश)

सन्तरी—महाराज, यह आपका सन्तरी, तुच्छ सेवक, महाराजाधिराज दर्शनद्वीपपति श्री उग्रसेन जी अग्निहोत्री महामान्य की सेवा में उपस्थित होता है। आज्ञा दी जाए।

महाराज—कुछ नहीं, अब चले जाओ। तलवार की आवश्यता नहीं रही। हाँ यह बताओ कि सीधे सादे शब्दो में वातें करना कब सीखोगे?

सन्तरी—सेवक पुराना दास है और आरम्भ ही से ऐसी ही भाषा बोलने का अभ्यास है।

(सन्तरी चला जाता है)

महारानी—हाँ तो मैं कह रही थी कि राजकुमारी के पिछले स्वयम्बर पर दूर-दूर से राजकुमार आए थे। हमने राजकुमारी को एक

एक राजकुमार के समस्त गुणों से, जो आजकल के युग में स्थिति को देखते हुए ··

महारानी—मैं पूछती हूँ वह देखने में कैसा है? काना तो नहीं, लुजा या बहरा या इसी प्रकार का कोई और दोष जो बहुधा राजकुमारों में आजकल के युग में, स्थिति को देखते हुए ·

महामन्त्री—नहीं महारानी जी, इस सम्बन्ध में विश्वस्त सूत्रों से इस प्रकार की कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई। इसके अतिरिक्त मुझे यह कहने में तनिक संकोच नहीं कि राजकुमारी चन्द्रा का चरित्र दिन के सूर्य की भांति उज्ज्वल और रात्रि की ओस की भांति पवित्र है।

महारानी—इन बातों को बार-बार दोहराने से क्या लाभ? तुम्हें पता है पिछले स्वयंवर में क्या हुआ था।

महामन्त्री—नहीं महारानी जी, मैं उन दिनों यहाँ मौजूद न था—समुद्र पार देशों का भ्रमण कर रहा था।

महारानी—हां, हां, उन दिनों वह दूसरा मूर्ख मौजूद था। हां तो मैं क्या कह रही थी महाराज?

महाराज—तुम राजकुमारी के पिछले यानी यदि ठीक गणित लगाया जाए तो आठवें स्वयंवर की बातें कर रही थीं—आठवां स्वयंवर था न वह, महामन्त्री?

महामन्त्री—हां महाराज, आप ठीक

महारानी—आठवां कैसे होगा? सातवां स्वयंवर था वह। मुझे भली प्रकार याद है कि वह सातवां था, क्यों मंत्री?

महामन्त्री—आपने ठीक ही कहा महारानी जी।

महाराज—यदि हम दोनों ठीक हैं, तो गलत कौन है?

महामन्त्री—गणित, महाराज। गणित अवश्य गलत होगा। आप विचार कीजिए न, यदि एक राजकुमारी अपने ७ स्वयंवर रचाए

और सातो विफल सिद्ध हों अर्थात् वहीं के वहीं पड़े रहें तो सात स्वयवर हुए न सब मिलाकर। परन्तु यदि इन पर सूद दर सूद लगाया जाए तो यहा स्वयर एक वर्ष के भीतर-भीतर आठ हो जाते हैं। सात जमा एक बराबर आठ। आप जानते ही हैं कि दर्शन द्वीप मे स्वम्वरो पर भी सूद लगता है। वास्तव मे वे सात ही हैं परन्तु सूद लगा कर आठ अर्थात् सात आठ, आठ सात।

महाराज—आह, यह बात! परन्तु ऐं, यह सूद कौन चुकाता है! क्या मेरी निजी सम्पत्ति? मेरी तलवार कहाँ है, मेरी तलवार कहाँ है?—सन्तरी!

महामन्त्री—नहीं महाराज, राजकीय कोष से। आठ क्या, यदि आठ हजार स्वयवर भी हों तो भी राजकीय कोष ही से सूद चुकाया जाएगा।

महाराज—तब तो ठीक है।

(सन्तरी का प्रवेश)

सन्तरी—महाराज, यह आपका सन्तरी, तुच्छ सेवक, महाराजाधिराज दर्शनद्वीपपति श्री उग्रसेन जी अग्निहोत्री महामान्य की सेवा में उपस्थित होता है। आज्ञा दी जाए।

महाराज—कुछ नहीं, अब चले जाओ। तलवार की आवश्यता नहीं रही। हाँ यह बताओ कि सीधे सादे शब्दो में बातें करना कब सीखोगे?

सन्तरी—सेवक पुराना दास है और आरम्भ ही से ऐसी ही भाषा बोलने का अभ्यास है।

(सन्तरी चला जाता है)

महारानी—हाँ तो मैं कह रही थी कि राजकुमारी के पिछले स्वयवर पर दूर-दूर से राजकुमार आए थे। हमने राजकुमारी को एक

झरोके मे खड़ा किया था।

महाराज—राजकुमार घोड़े पर सवार होकर झरोके के सामने से गुजर रहे थे। शर्त यह थी कि राजकुमारी के दर्शनो के उपरान्त राजकुमारों का मुकाबला होगा और जो राजकुमार जीत जाएगा, वही राजकुमारी के विवाह का अधिकारी होगा।

महारानी—और हुआ यह कि राजकुमारी को देखने के पश्चात् वे सब के सब एकदम अपने घोड़ों से नीचे उतर पड़े और यह दिखाने लगे जैसे उनके स्पर्धी ने उन्हे पराजित कर दिया।

महाराज—परन्तु उनमे से एक ने घोड़े से उतरने मे तनिक दर की, उसका पाव तनिक रकाब मे फँस गया था। मैंने उसे वहीं घोड़े पर रोक दिया और उसे राजकुमारी के विवाह का अधिकारी घोषित कर दिया।

महारानी—और उस रात को राजमहल में विवाह की रस्म से पहले जो भोजन हुआ उसमें राज्य की प्रथा के अनुसार उसे एक प्रश्न का उत्तर ठीक-ठीक देना था। परन्तु जब उससे प्रश्न पूछा गया तो वह ठीक उत्तर न दे सका—

महाराज—बेचारे ने प्रयत्न बहुत किया।

महारानी—प्रयत्न ? वह बताना ही न चाहता था। प्रश्न सरल था—वह कौन-सा पशु है जिसकी चार टागें होती हैं और भौकता है कुत्ते की भाति। उत्तर है एक कुत्ता।

महाराज—परन्तु वह इस सरल प्रश्न का भी ठीक उत्तर न दे सका। पहले उसने कहा—एक तोता, फिर कहा साप, एक चील, एक ऊँचा पर्वत, दो मोर, चाँदनी रात—हजार प्रयत्न करने पर भी कुत्ते का नाम वह न ले सका।

महामन्त्री—फिर क्या हुआ महाराज ?

महाराज—दूसरे दिन वह दुर्ग की खाई मे पाया गया।

महामन्त्री—वहाँ क्या कर रहा था महाराज ?

महाराज—पता नहीं। खाई के गहरे पानी मे उसका शरीर तैरता दिखाई दिया। कुछ लोगों को मरने वाद भी तैरने का चाव वना रहता है।

(राजकुमारी का प्रवेश)

राजकुमारी—पिता जी, पिता जी देखिए। वाटिका में हमारा चित्र-कार कितना सुन्दर चित्र वना रहा है।

महाराज—तुम्हारा ?

राजकुमारी—नहीं, एक मोर और मोरनी का—अहा कितना सुन्दर चित्र है।

महारानी—चन्द्रा !

राजकुमारी—जी माता जी।

महारानी—तुम्हें ज्ञात है कि आज राजकुमार उदयसिह आने वाले हैं।

राजकुमारी—वे तो आ भी चके माता जी। मैंने अभी दुर्ग का लोहे का पुल खाई पर गिरते देखा था।

महामत्री—तव तो मुझे चलना चाहिए।

राजकुमारी—परन्तु अभी तो देर है। उस पुल को खाई पर रखने के लिए भी तो आध घटा चाहिए।

महामन्त्री—जी हा आप ठीक कहती है। मेरे विचार में उस पुल के कलपुर्जों में वर्षों से तेल नहीं दिया गया।

महाराज—महामन्त्री, तुम जाकर सव प्रवन्ध करो।

महामन्त्री—वहुत अच्छा महाराज।

महारानी—क्या महामन्त्री को यह वात वता दी गई है।

महाराज—नहीं तो। मैं वात करने ही वाला था कि .

महारानी—अच्छा तो मैं जाकर महामन्त्री को इस सम्वन्ध में सव

बातें बता देती हूँ। आप चन्द्रा से बातें कर लें।

महाराज—अभी ?

महारानी—इसी समय। और कोई मार्ग नहीं है इस कठिनाई से निकलने का।

(महारानी का प्रस्थान)

महाराज—चन्द्रा बेटी, मैं तुमसे तुम्हारे विवाह के सम्बन्ध में बातें करना चाहता हूँ।

राजकुमारी—मैं सुन रही हूँ पिता जी।

महाराज—अब समय आ गया है कि तुम जीवन के दो-चार सत्यों को भली प्रकार समझ लो। पहला सत्य यह है कि मनुष्य को विवाह हो जाने के पश्चात् ही जीवन के वास्तविक सुख और आनन्द का अनुभव होता है। हमारे देश का दर्शनशास्त्र और इतिहास यही सिद्ध करता है।

राजकुमारी—और आपका अनुभव भी यही सिद्ध करता होगा।

महाराज—मैं इस समय दर्शनशास्त्र और इतिहास की बातें कर रहा हूँ, अपने अनुभव की नहीं। मेरा मतलब है कि हो सकता है एक आध उदाहरण ऐसे मिल जाएँ जिसमें विवाह के पश्चात् मनुष्य को पूर्ण आनन्द प्राप्त न हुआ हो। परन्तु ऐसे उदाहरण एक आध ही हैं, वरना मनुष्यों का बहुमत

राजकुमारी—मैं समझ गई पिता जी।

महाराज—तुम अत्यन्त समझदार हो। वास्तव में बात यह है कि तुम्हें इससे कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए कि तुम्हारा विवाह किससे हो रहा है और कैसे हो रहा है। बस तुम विवाह कर रही हो और विवाह के पश्चात् सदा सुखी रहोगी।

राजकुमारी—जी हाँ, पिता जी।

महाराज—तो उस सम्बन्ध में मैंने और तुम्हारी माता जी ने एक

युक्ति सोची है। तुम्हारी दासी है न ?

राजकुमारी—कौनसी ? यू तो मेरी बहुत सी दासियाँ हैं।

महाराज—मेरा मतलब है जो सब से सब से...मेरा मतलब है जो बहुत सुन्दर दिखाई पड़ती है।

राजकुमारी—छपरा ?

महाराज—हाँ, हाँ, वही। हमने निर्णय किया है कि प्रथम भेंट के अवसर पर जब राजकुमार तुम्हारे दर्शन करेगा तो ... तो ... मेरा मतलब है कि तुम्हारे स्थान पर छपरा होगी और तुम छपरा के स्थान पर। विवाह की रस्मों से पूर्व हम उसे राजकुमारी चन्द्रा बनाए रखेंगे जिससे ... अर्थात् ... कहने का मतल बयह कि इससे राजकुमार को विवाह करने में सुविधा होगी। ठीक विवाह के समय तुम्हारे मुख पर घूँघट पड़ा होगा जिससे यह भी पता लगता है कि यह घूँघट की प्रथा कैसे पड़ी —खैर, यह तो एक अलग की बात है—असली बात यह है कि विवाह की रस्म तक तुम्हें अपने को राजकुमारी नहीं, राजकुमारी की नौकरानी बनना पडेगा। समझ गई ? अब तुम जा सकती हो। मैंने तुम्हारी नौकरानी छपरा को बुलाया है जिससे उसे भी सब बातें समझा दू। अब तुम जाकर वाटिका में खेलो—हमारे चित्रकार के चित्र देखो।

(राजकुमारी का प्रस्थान, सन्तरी का प्रवेश)

सन्तरी—महाराजाधिराज, दर्शनद्वीप-पति श्री उग्रसेन जी अग्निहोत्री महामान्य की सेवा में दासी छपरा उपस्थित होने की प्रार्थी है।

महाराज—(खांसकर) हाँ, हाँ, उसे अन्दर आने दो।

छपरा—दासी महाराज को सादर प्रणाम करती है।

महाराज—बेटी छपरा, यहाँ इस गद्दी पर। अच्छा, अब तुम यह समझो कि हम राजकुमार उदयसिंह है।

बातें बता देती हूं। आप चन्द्रा से बातें कर लें।

महाराज—अभी?

महारानी—इसी समय। और कोई मार्ग नहीं है इस कठिनाई से निकलने का।

(महारानी का प्रस्थान)

महाराज—चन्द्रा बेटी, मैं तुमसे तुम्हारे विवाह के सम्बन्ध में बातें करना चाहता हूं।

राजकुमारी—मैं सुन रही हूं पिता जी।

महाराज—अब समय आ गया है कि तुम जीवन के दो-चार सत्यों को भली प्रकार समझ लो। पहला सत्य यह है कि मनुष्य को विवाह हो जाने के पश्चात् ही जीवन के वास्तविक सुख और आनन्द का अनुभव होता है। हमारे देश का दर्शनशास्त्र और इतिहास यही सिद्ध करता है।

राजकुमारी—और आपका अनुभव भी यही सिद्ध करता होगा।

महाराज—मैं इस समय दर्शनशास्त्र और इतिहास की बातें कर रहा हूं, अपने अनुभव की नहीं। मेरा मतलब है कि हो सकता है एक आध उदाहरण ऐसे मिल जाएँ जिसमें विवाह के पश्चात् मनुष्य को पूर्ण आनन्द प्राप्त न हुआ हो। परन्तु ऐसे उदाहरण एक आध ही हैं, वरना मनुष्यों का बहुमत

राजकुमारी—मैं समझ गई पिता जी।

महाराज—तुम अत्यन्त समझदार हो। वास्तव में बात यह है कि तुम्हें इससे कोई सम्बन्ध नहीं होना चाहिए कि तुम्हारा विवाह किससे हो रहा है और कैसे हो रहा है। बस तुम विवाह कर रही हो और विवाह के पश्चात् सदा सुखी रहोगी।

राजकुमारी—जी हाँ, पिता जी।

महाराज—तो उस सम्बन्ध में मैंने और तुम्हारी माता जी ने एक

युक्ति सोची है। तुम्हारी दासी है न ?

राजकुमारी—कौनसी ? यू तो मेरी बहुत सी दासियाँ है।

महाराज—मेरा मतलब है जो सब से सब से...मेरा मतलब है जो बहुत सुन्दर दिखाई पड़ती है।

राजकुमारी—छपरा !

महाराज—हाँ, हाँ, वही। हमने निर्णय किया है कि प्रथम भेंट के अवसर पर जब राजकुमार तुम्हारे दर्शन करेगा तो ... तो ... मेरा मतलब है कि तुम्हारे स्थान पर छपरा होगी और तुम छपरा के स्थान पर। विवाह की रस्मों से पूर्व हम उसे राजकुमारी चन्द्रा बनाए रखेंगे जिससे .. अर्थात्... कहने का मतल बयह कि इससे राजकुमार को विवाह करने मे सुविधा होगी। ठीक विवाह के समय तुम्हारे मुख पर घूँघट पडा होगा जिससे यह भी पता लगता है कि यह घूँघट की प्रथा कैसे पड़ी —खैर यह तो एक अलग की बात है—असली बात यह है कि विवाह की रस्म तक तुम्हें अपने को राजकुमारी नहीं, राजकुमारी की नौकरानी बनना पडेगा। समझ गई ? अब तुम जा सकती हो। मैंने तुम्हारी नौकरानी छपरा को बुलाया है जिससे उसे भी सब बातें समझा दू। अब तुम जाकर वाटिका में खेलो—हमारे चित्रकार के चित्र देखो।

(राजकुमारी का प्रस्थान, सन्तरी का प्रवेश)

सन्तरी—महाराजाधिराज, दर्शनद्वीप-पति श्री उग्रसेन जी अग्निहोत्री महामान्य की सेवा में दासी छपरा उपस्थित होने की प्रार्थी है।

महाराज—(खासकर) हाँ, हाँ, उसे अन्दर आने दो।

छपरा—दासी महाराज को सादर प्रणाम करती है।

महाराज—बेटी छपरा, यहाँ इस गद्दी पर। अच्छा, अब तुम यह समझो कि हम राजकुमार उदयसिंह है।

छपरा—उई ! (हसती है)

महाराज—और तुम राजकुमारी चन्द्रा हो—अपार सुन्दरी चन्द्रा जिसे आज तक राजकुमार उदयसिंह ने देखा नहीं ।

छपरा—उई ! (हँसती है)

महाराज—देखो, छपरा यह तुम्हारे जीवन का सबसे बड़ा अवसर है । यह हसी तुम्हे उस समय कोई सहायता न देगी । गभीरता-पूर्वक बैठो—इसी प्रकार राजकुमारियों जैसे ठाठ से । मैं इस द्वार से प्रवेश करता हूँ । सन्तरी मेरा नाम पुकारता है—'सिंहल द्वीप के राजकुमार श्री उदयसिंह जी महाराज ।'

छपरा—उई ! (हँसती है)

महाराज—हँसो नहीं । मुँह बन्द करो—आँखें बन्द न करो । आँखों मे एक अद्‌भुत सी चमक उत्पन्न करो, एक जादू कर देने वाली दृष्टि से देखो—मेरी ओर नहीं—कहीं दूर—मेरा मतलब है कि आँखों मे एक ऐसी प्यारी-सी चमक, ऐसी दृष्टि जैसे तुम्हारा ध्यान यहा नहीं है कहीं और है । अब मैं तुम्हारे निकट आता हूँ । तुम अपना हाथ आगे बढाती हो—अरे, मुझे धक्का क्यों देती हो ? हाँ अब ठीक है । मैं तुम्हारा हाथ अपने हाथ में लेकर कहता हूँ—"राजकुमारी, यह मेरे जीवन का अर्थात् मेरा मतलब है कि इस जीवन की नैया का, यू कहिए कि प्रेम की नदिया मे वह क्या कहते है—अच्छा वह स्वय कह लेगा—मेरा मतलब है कि राजकुमार तुम से कुछ कहेगा और फिर वह तुम्हारा हाथ अपने दिल पर रखेगा और फिर फिर तुम क्या कहोगी ?

छपरा—उई ! (हँसती है) ही, ही, ही !

महाराज—फिर वही ही ही ही ! यह घुड़साल नहीं है राजमहल है । वास्तव में तुमको कहना होगा 'आह राजकुमार !'

छपरा—आह राजकुमार !

महाराज—इतना ऊँचा नहीं। सम्भव है वह बहरा न हो और तुम्हारे इस प्रकार चिल्लाने की आवश्यकता न पड़े। मेरा अपना विचार है कि वह इतना बहरा न होगा। मैं यह चाहता हूँ कि तुम इन दो शब्दों को अति सुन्दरता और कोमलता से कहो—एक उसास भरकर धीरे-धीरे—जैसे गगन में दो सुन्दर कबूतरिया उड़ रही हों !

छपरा—(दोहराती है) आह राजकुमार।

महाराज—मैंने कबूतरिया कहा था, कौवे नहीं। खैर अब जैसा भी हो। सुनो, तुम्हें किसी से प्रेम है ?

छपरा—उंह ! (हसती है) एक सिपाही है, महाराज के महल के बाहर उसका पहरा है, घसीटू नाम है, अभी तो नौकरी पक्की नहीं हुई, राजसिंह जो छुट्टी पर गया है न, उसकी जगह काम कर रहा है—मगर गारद का बड़ा अफसर कहता है उसका काम बड़ा अच्छा है—उसे गारद में एक और आदमी चाहिये भी, इसलिए अगर उसे···

हाराज—बस-बस अब ठीक है। सुनो ! जब तुम रामकुमार उदयसिंह से मिलो तो बस इतना करना कि हर समय अपने मन में घसीटू का ध्यान रखना—उसका रूप रग, उसके हाव-भाव, उसका तुम्हारी ओर देखना, तुम्हारा उसे देखकर लजाना, शरमाना बात-बात पर सकुचाना और बदन चुराना—यदि तुम यह सब बातें ध्यान में रखोगी तो सब काम ठीक हो जाएगा और तुम्हारे घसीटू को भी उसकी नौकरी मिल जाएगी।

(परदा)

(राजमहल की वाटिका में राजकुमार का पाचू के वेश में प्रवेश—राजकुमारी छपरा के रूप में आती है)

राजकुमार--(गाता हुआ) 'मैं हूँ सिंहल द्वीप का राजकुमार'·· मैं हूँ···

राजकुमारी—ऐं तुम कौन हो ? इस वाटिका मे कैसे आए ?

राजकुमार—तनिक बैठ जाने दो। बड़ी लम्बी कहानी है, साँस लेकर सुनाऊँगा।

राजकुमारी—परन्तु तुम्हें पता नही यह राजमहल की वाटिका है।

राजकुमार—अच्छा, बहुत खूब, बहुत सुन्दर है।

राजकुमारी--तुम कौन हो ? तुम्हारा नाम क्या है ?

राजकुमार—मेरा नाम पाँचू है। और तुम ?

राजकुमारी—मेरा नाम छपरा है।

राजकुमार—बहुत खूब। आओ उस सगमरमर की चौकी पर बैठ जाएँ।

राजकुमारी—परन्तु यहाँ तो राजा रानी बैठते हैं।

राजकुमार—कोई बात नहीं। मैं बहुत दूर से आ रहा हूँ।

राजकुमारी—ओह, तुम मुझे अपनी कहानी सुनाओगे न ? सचमुच मुझे कहानिया बड़ी अच्छी लगती हैं।

राजकुमार—सच तो यह है कि मेरी कोई कहानी नहीं। बात बस इतनी है कि मैं राजकुमार उदयसिंह का नौकर हूँ और उनके साथ आया हूँ।

राजकुमारी—और मैं राजकुमारी चन्द्रा की दासी हूँ। परन्तु तुम यहा कैसे आए ? अभी तो खाई का पुल ठीक नहीं हुआ। उसके कल-पुर्जों मे तेल दिया जा रहा है।

राजकुमार—मैं खाई फाँदकर आ रहा हू।

राजकुमारी—सचमुच, क्या पूर्वी दीवार के पीपल के वृक्ष पर से छलाग लगाकर ?

राजकुमार—तुम्हें कैसे मालूम पड़ा ?

राजकुमारी—मैं भी कई बार ···

राजकुमार—तम भी कई बार ? अरे वह तो जान-जोखिम का मामला है। मेरा सास अभी तक फूल रहा है।

राजकुमारी—तुम्हारा शरीर भी तो भारी है। और मैं तुमसे कहीं हल्की-फुल्की हूँ।

राजकुमार—कितनी हल्की-फुल्की हो, लाओ, देखें तुम्हें उठाकर (उठाता है)

ओह, सचमुच तुम तो फूल की भाति हल्की है, कोमल हो, काश, मैं तुम्हें आजीवन इसी प्रकार बाहों में

राजकुमारी—(हँसती है)

राजकुमार—क्यों हँस रही हो ?

राजकुमारी—एक बात है।

राजकुमार—बताओ न।

राजकुमारी—नहीं।

राजकुमार—क्यों नहीं ?

राजकुमारी—यह अपने मन की बात है।

राजकुमार—एक मन की बात हम बताए, एक मन की बात तुम ताओ।

राजकुमारी—पहले तुम बताओ।

राजकुमार—नहीं, पहले तुम ताओ।

राजकुमारी—अच्छा, मुझे छोडो तो—हा, बात यह है कि जब मेरा जन्म हुआ तो एक परी ने वरदान दिया कि मैं बहुत सुन्दर हूगी।

राजकुमार—उसने बिलकुल सच कहा था।

राजकुमारी—परन्तु दूसरी परी ने मेरा मस्तक चूमकर कहा था कि "भोली-भाली लड़की, सुहाग की अनोखी रात, न कोई जाने न कोई पूछे, एक अनोखी बात।"

राजकुमार—इसका मतलब ?

राजकुमारी—उस समय भी इसका कोई मतलब न समझा। फिर हुआ यह कि मैं बड़ी होने लगी और बड़ी होकर मैं सुन्दर होने के स्थान पर बदसूरत होने लगी—मेरा मतलब यह कि कोई विशेष बात न थी सुन्दरता की मुझ में—बस जैसी साधारण लड़किया होती हैं। मैं सोचती यह क्या हो गया ? एक दिन जब मैं दस वर्ष की हुई तो वन मे वही दूसरी परी मुझे मिल गई। मैंने उससे पूछा तो उसने मुझे बताया कि वास्तव मे मैं सुन्दर हूँ। अति सुन्दर, परन्तु मेरी सुन्दरता को विवाह से पहले कोई देख न सकेगा क्योंकि वह न चाहती थी कि मेरी सुन्दरता मेरे स्वभाव में अभिमान और घमण्ड न भर दे, मुझे क्रूर और निर्दय न बना दे। वह मुझे इन दोषों से मुक्त रखना चाहती थी। उसी कारण उसने यह युक्ति निकाली। अब उस दिन से लोगों को मैं कुरूप दिखाई देती हूँ परन्तु अपने दर्पण मे मुझे अपना सौंदर्य साफ झलकता है। अच्छा, अब तुम अपने मन की बात बताओ।

राजकुमार—मेरी कहानी इतनी रोचक नहीं। वह बात केवल इतनी है कि राजकुमार उदयसिंह ने कहीं से सुन रखा था कि दर्शन द्वीप की राजकुमारी अति सुन्दर है और स्वभाव की अभिमानिनी और तेज है। वह बेचारा साधारण रूप-रग का मनुष्य है। उसने सोचा कि वह अपने नौकर को विवाह के दिन तक राजकुमार बना दे और वही राजकुमारी से प्रथम भेंट करे परन्तु विवाह की रात्रि वह स्वय राजकुमारी विवाह के साथ मंडप में बैठ जाएगा।

राजकुमारी—वह कैसे होगा ?

राजकुमार—राजकुमार कवच पहन कर विवाह करेगा, कवच में से

तो मुख दिखाई नहीं देता।

राजकुमारी—(हँसती है) क्या मजे की बात है।

राजकुमार—है न ? (हँसता है)

(राजकुमारी हँसे चली जाती है)

राजकुमार—अरे, तुम तो हसे जा रही हो—इसमें इतने हँसने की बात क्या है ?

राजकुमारी—यह एक मन की बात है।

राजकुमार—एक मन की बात हम और भी बता सकते है। परन्तु पहले तुम बताओ।

राजकुमारी—नहीं, पहले तुम।

कुमार—अच्छा लो सुनो, मेरा नाम पॉचू नहीं है। मैं सिंहल द्वीप युवराज कुमार श्री उदयसिंह हूँ—ओह, मर गया।

राजकुमारी—क्या हुआ ?

राजकुमार—घुटने में चोट लग गई। मैं युवराज उदयसिंह हूँ।

राजकुमारी—लाओ मैं घुटना दाब दूँ।

राजकुमार—नहीं, मैं युवराज उदयसिंह हूँ।

राजकुमारी—अब क्या हाल है ?

राजकुमार—मैं युवराज उदयसिंह हूँ।

राजकुमारी—मुझे पता है।

राजकुमार—तुम्हें किसने बताया

राजकुमारी—अभी तुम ही ने तो बताया है।

राजकुमार—ऐं · हाँ ·· हाँ ·· परन्तु तुम्हें सुनकर मूर्छित हो जाना चाहिए था। मैंने कहानियो में बहुधा ऐसा ही पढा है।

राजकुमारी—मैं कहानियों की लड़की नहीं हूँ राजकुमार, और अब मैं तुम्हें अपनी मन की बात बताती हूँ—अरे, तुमने सुना यह शोर ?—लोग राजकुमार उदयसिंह के आने की खुशी मना

रहे हैं।

राजकुमार—उसका अर्थ यह है कि खाई पर पुल रख दिया गया होगा?

राजकुमारी—कभी का—अब तो मेरा विचार है कि तुम्हारा नौकर मेरी दासी छपरा के साथ प्रेम के गीत गा रहा होगा।

राजकुमार—क्या तुम ...

राजकुमारी—हाँ मैं राजकुमारी चन्द्रा हूं। मै भी तुम्हारी भाँति डरती थी......इसीलिए मैंने भी ..

राजकुमार—परन्तु राजकुमारी, तुम तो अति सुन्दर हो।

राजकुमारी—हाँ राजकुमार, मुझे दूसरी परी ने यह भी बताया था कि सारा ससार मुझे बदसूरत समझेगा। परन्तु वह पुरुष जो मुझे प्रथम बार ही सुन्दर समझ लेगा, मुझ से विवाह करेगा और फिर मै सारे ससार को सुन्दर दिखाई देने लगूँगी।

राजकुमार—मेरी चन्द्रा, तुम सचमुच चन्द्रमा की भाँति सुन्दर हो।

(परदा)

(दर्शन द्वीप के राजमहल के एक भव्यशाली भाग में विवाह-मंडप सजा हुआ है। विवाह की सारी तैयारियां की जा चुकी हैं। देश की प्रथा के अनुसार राजकुमार से एक प्रश्न पूछा जाता है जिसका ठीक-ठीक उत्तर देते ही, विवाह की कार्यवाही आरम्भ हो जाएगी।)

महामन्त्री—अब मैं महाराजाधिराज दर्शन द्वीपपति श्री अग्निहोत्री जी महामान्य की आज्ञा से राजकुमार उदयसिंह जी से एक प्रश्न पूछना चाहता हूँ।

महारानी—(**महाराज के कान में**) पहले की भांति इस बार तो सारा खेल बिगड़ जाने का भय नहीं है?

महाराज—तनिक भी नहीं महारानी, मैंने राजकुमार को इसका

उत्तर पहले ही बता दिया है। वे भूल नहीं सकते। क्यों उदय सिंह जी, भूलोगे तो नहीं? याद रखना उत्तर है—कुत्ता।

राजकुमार—जी, अच्छा, कुत्ता, कुत्ता, कुत्ता।

महाराज—महामन्त्री, मैं अब तुम्हे आज्ञा देता हूँ कि तुम राजकुमार उदयसिंह से वह सवाल पूछ लो, क्योंकि मै चाहता हूँ कि मेरे राज्य मे प्रत्येक कार्य सविधान के अनुसार उचित रीति से सम्पन्न हो। सिंहल द्वीप राज्य के सविधान की धारा ६ के अनुसार कोई राजकुमार उस समय तक राजकुमारी से विवाह नहीं कर सकता जब तक वह इस प्रश्न का उत्तर ठीक-ठीक न दे सके। पिछली बार एक राजकुमार उस प्रश्न का ठीक उत्तर देने में असमर्थ रहा था। वह राजकुमारी से विवाह न कर सका। और दूसरे दिन उसकी लाश खाई मे पाई गई।

महामन्त्री—राजकुमार, आप इस अन्तिम परीक्षा मे से गुज़रने को तैयार हैं?

राजकुमार—मैं तैयार हूँ, कुत्ता, कुत्ता, कुत्ता।

महामन्त्री—अच्छा तो यह प्रश्न मैं अब तुमसे पूछता हूँ। बताओ वह कौन सी वस्तु है जिसके चार टांगें होती हैं और जो कुत्ते की भांति भौंकती है?

राजकुमार—बिल्ली।

महाराज—शाबाश, शाबाश, बहुत ठीक।

(शोर मच जाता है—"बधाई हो महाराज!")

(राजकुमार और राजकुमारी को महामन्त्री उठाकर विवाह-मंडप की ओर ले जाते है)

महाराज—तुमने कुछ देखा महारानी?

महारानी—क्या?

महाराज—मुझे ऐसा प्रतीत हुआ जैसे राजकुमारी वदसूरत नहीं

रही। पहले की भांति, बल्कि पहले से भी सुन्दर और प्यारी बन गई है—दिन के सूरज की भांति सुन्दर, रात की ओस की भांति पवित्र।

महारानी—उँह, कुछ नहीं, यह केवल विवाह की खुशी है।

(परदा)

(समाप्त)

मंगलीव

नाटक के पात्र

प्राण

हमीद

मुण्डू

समय–दोपहर

स्थान–लाहौर, शहर में एक ऊँचे तिमंजिले
मकान की बरसाती

मंगलीक

(सीढ़ियो पर भारी क़दमो की चाप सुनाई देती है और हमीद जिसकी आवाज से स्पष्ट रूप में प्रकट होता है कि उसका सास फूल गया है, यह कहता हुआ बरसाती के अन्दर प्रवेश करता है।)

हमीद—कहाँ हो प्राण ? ओ प्राण !

प्राण—मैं यहाँ इस बरसाती में बैठा हूँ हमीद, अन्दर आजाओ .. इस ओर।

हमीद—(गहरी लम्बी सास लेकर) ओह, अजीब सीढियाँ हैं तुम्हारे मकान की। चढ़ते जाओ, चढ़ते जाओ, कभी खत्म न हो। छत पर बैठना कहाँ की शराफत है। मुझ जैसे मोटे आदमी को इससे अधिक और क्या सजा दी जा सकती है कि उसे तुम्हारे तिमजिले मकान की तग और अधेरी सीढियों पर दिन में एक दो बार चढने उतरने को कहा जाए .अच्छी शराफत है।

प्राण—तो अपने मकान की बैठक में बैठना भी पाप है। सिगरेट पिओगे ?

हमीद—तनिक दम ले लूँ (एक लम्बा सांस लेकर) ईमान से तुम्हारे मकान की सीढियाँ कुतुबमीनार की सीढियों की तरह लम्बी और पेचदार हैं—एक गिलास पानी तो मगाओ।

प्राण—(हँस कर) मोटे आदमी को पसीना और गुस्सा बहुत जल्दी

आ जाता है। सोडा मगाऊँ ? मुण्डू . ओ मुण्डू . अबे निकम्मे ऊपर आ!

मुण्डू—(नीचे से) जी आया!

प्राण—अच्छा देख, वहीं से मेरी बात सुन ले, लपककर गली के नुक्कड़ वाली दूकान से एक बोतल सोडा और एक पैसे की बर्फ ले आ। सुना तूने ?

मुण्डू—(नीचे से) जी अभी लाया

प्राण—हाँ तो तुम क्या कह रहे थे, हमीद ?

हमीद—(सिगरेट सुलगाकर और कश लेकर) हूँ . . . हूँ . . . मैं कह रहा था कि तीसरी मंजिल की छत पर बरसाती में बैठकर धूप तापना कहाँ की शराफत है ?

प्राण—मगर इसमें दोष क्या है ?

हमीद—इसमे दोष क्या है ? मुहल्ले की बहू-बेटियों को परेशान करते हो और फिर तुम्हें यह पूछने की हिम्मत होती है कि इसमे दोष क्या है। क्या यह शरीफों के चलन हैं ? जो भलेमानस होते हैं वे नीचे बैठकों में बैठते हैं, जिससे मुहल्ले की सब औरतें छत पर बैठकर बेफिक्री से बातें कर सकें ... और अब तुम ही बताओ जब से तुम छत पर आए हो, क्या मुहल्ले की छतों पर दो-दो फर्लांग तक भी कोई औरत दिखाई पड़ती है ? इस पर तुम मुझसे पूछते हो कि इसमे दोष क्या है! अरे भाई, क्या तुम हमारी तहज़ीब की अलिफ-बे-प भी जानकारी नहीं रखते।

प्राण—तो क्या हमारी सभ्यता यही कहती है कि मर्द नीचे बैठकों मे बैठकर जाड़े से ठिठुरें और औरतें कोठों पर चढ़कर एक दूसरे को ताने दे-दे कर सारा मुहल्ला सिर पर उठा लें ? अब देखो जब से मैं यहा बैठा हूँ कितनी शान्ति है .. शान्ति

. निस्तब्धता . खामोशी . . और धूप कितनी मीठी है। जी चाहता है दिन भर यहीं बैठा रहूँ।

हमीद—और मेरा जी चाहता है तुम्हारा मुँह झुलस दूँ। याद रखो अगर मुहल्ले वालो के साथ तुम्हारा यही चलन रहा तो फिर दो चार दिन में तुम पर ऐसे इलजाम लगाए जाएंगे और मुहल्ले की वे बूढी दादियाँ जो आज 'कहो बेटा कैसे हो' और 'बड़ा नेक लड़का है' कहती हैं, उस समय तुम्हारे विरुद्ध ऐसा तूफान उठाएंगी कि तुम्हारा जीना दूभर हो जायगा और मुहल्ले में टिकना नामुमकिन। मेरी बात सुनो, अभी समय है, चुपके से नीचे बैठक में चले चलो।

प्राण—(हंसकर) भाई हमीद, तुम्हारी बातें बहुत रोचक होती हैं—रोचक और अर्थहीन—तुम यहाँ आकर कैसी मज़ेदार और बहकी-बहकी बातें करते हो।

हमीद—यह सब तुम्हारे महल्ले के जलवायु का असर है। तुमने यहाँ नाजायज शराब खींचने की भट्टी तो नहीं लगा रखी।

प्राण—(हंसकर) तुमने बिल्कुल ठीक अनुमान लगाया। मगर काश तुम आबकारी महकमे के इन्सपेक्टर होते, न कि एक बेकार, बे रोजगार इन्सान।

हमीद—महकमा आबकारी न सही, महकमा बेकारी ही सही, तुझे ढूँढ ही लेंगे कहीं न कहीं।

प्राण—फिर भी क्या करने का इरादा है?

हमीद—तुम अपनी कहो। मैं तो आज कल 'इलस्ट्रेटिड वीकली' के 'क्रासवर्ड पजल' भरता हूँ।

प्राण—अरे यह कब से?

हमीद—कोई एक हफ्ते से। बात यूँ हुई कि पिछले इतवार को नीले गुम्बद के मोड़ पर अनारकली की ओर जाते हुए मुझे एकाएक

नैयर मिल गया।

प्राण—कौन इकराम नैयर जो हमारे साथ बी० ए० मे पढता था !

हमीद—हाँ, वही बत्तख के बच्चे जितने बडे ऊँचे डील-डौल वाला। हाँ तो वह मुझे नीचे गुम्बद की ओर एक नई गहरे नीले रग की कार में से उतरता हुआ मिल गया। मुझ से मिलते ही कहने लगा—हलो हमीद बेटा, इतने दिनों कहाँ रहे ?

प्राण—तो तुमने उससे क्या कहा ?

हमीद—मैंने उससे क्या कहा ? मैं उससे क्या कह सकता था तुम ही जरा सोचो कि तुम्हारा एक साथी जिसे तुमने 'मिस्टर मेढक' से बड़े नाम से कभी न पुकारा हो, तुम्हे दो बरस के बाद एकाएक एक गहरे नीले रग की कार से

प्राण—(बात काटकर) बस-बस, मैं समझ गया।

हमीद—अच्छा तो तुम समझ गए कि मैंने उससे क्या कहा होगा।

प्राण—(हँसते हुए) हाँ-हाँ मगर यह तो बताओ उसने फिर क्या कहा ?

हमीद—उसने बताया कि वह आजकल जबलपुर में एक आफीसर है—साढे तीन सौ रुपया तनख्वाह पाता है और फर्स्ट ग्रेड आफीसर है। यहाँ वह और उसकी बीवी क्रिसमस के दिनों मे नुमायश देखने आए हैं। नुमायश का तो एक बहाना है। मेरे ख्याल में तो वह केवल अपनी कार और अपनी बीवी की नुमायश करने आया है—खासकर अपने दोस्तों को चिढाने

प्राण—(बात काट कर) मगर तुमने उसकी बीवी देखी ?

हमीद—अरे यार उसने मुझे तब तक न छोड़ा जब तक मैंने यह वायदा न कर लिया कि मै अगले दिन शाम को ५, गाल्फ रोड पर उसके यहाँ जरूर चाय पिऊँगा। लाचार होकर मुझे उसके यहाँ जाना पडा। वहाँ पता लगा कि जनाब ने गाल्फ

हमीद—तो अब मैं उस दिन से 'क्रासवर्ड पज़ल' हल करता हूँ।

प्राण—अच्छी सजा मिली तुम्हें!

हमीद—(हँसते हुए) प्राण, कुछ अजीब चक्कर है जिन्दगी का। मैं सोच नहीं सकता उस 'मिस्टर मेंढक' को कैसे नौकरी मिल गई? बदमाश ने किसी को धोखा दिया होगा।

प्राण—गोविन्द की तरह।

हमीद—कौन गोविन्द?

प्राण—अरे, वही मोटे-मोटे फूले हुए गालों वाला जो कालिज में लिटरेरी सोसाएटी का जूनियर वाइस प्रेसीडेंड हुआ करता था।

हमीद—हाँ, हाँ याद आ गया, मगर उसकी क्या बात है?

प्राण—अच्छा तो क्या तुम्हें पता नहीं? जनाब, वह बम्बई गया, किसी फिल्म कम्पनी में नौकरी करने। यह तो तुम जानते ही हो वह थोड़ा बहुत गा लेता था। बस वहाँ एक घटिया-सी फिल्म कम्पनी में नौकर हो गया—उस कम्पनी का नाम मुझे इस समय याद नहीं आ रहा—हाँ तो वहाँ जनाब से एक फिल्म एक्ट्रेस को प्रेम हो गया।

हमीद—अरे!

प्राण—आगे तो सुनो। तो जनाब बस एक दिन उस एक्ट्रेस के सारे जेवर ले भागे—सतलड़े हार, कगन, चूड़ियाँ, बाजूबन्द और गुलुबन्द और न जाने क्या-क्या—

हमीद—आखिर पकड़ा गया?

प्राण—हाँ, नासिक में पकड़े गए—ढाई साल की सजा भी हो गई।

हमीद—ढाई साल तो ज्यादा नहीं··· और फिर जेवर तो बहुत होंगे।

प्राण—नहीं वे तो सब पीतल के निकले—झोल किए हुए बेचारा गोविन्द!

हमीद—मगर वह एक्ट्रेस क्या हुई—मुझे तो बहुत समझदार औरत मालूम होती है—अगर तुम उससे शादी—

प्राण—(बात काटकर) शायद तुम्हारा मन ललचा गया है। अरे मियाँ, उसकी कई बार शादी हो चुकी है। उससे पहले वह दस मर्दों को तलाक दे चुकी है।

हमीद—अब ग्यारहवाँ कौन है ?

प्राण—एक फिल्मी अखबार का एडीटर—भला सा नाम है—अब्बु जफर, कि क्या ?

हमीद—अब्बुजफर ? अब्बुजफर ? अरे कहीं वही तो नहीं जो कुछ साल पहले हमारे कालिज के मैगजीन का एडीटर था और जिस की एक आँख कानी थी और जो मिस ऊषारानी पर आँख रखता था।

प्राण—कौन सी आँख ? कानी।

हमीद—(हँसते हुए) नहीं ··· दूसरी।

प्राण—फिर उसका क्या हुआ ?

हमीद—किसका ?—कानी आँख का !

प्राण—नहीं, मेरा मतलब है ऊषा का।

हमीद—वह, सुना है ऑक्सफोर्ड चली गई, वहाँ उसने किसी एंग्लो-इंडियन से शादी करली · अरे वह क्या है ?

प्राण—क्या है ?—पतंग।

हमीद—पतंग नहीं लड़की !

प्राण—आकाश मे उड़ती हुई।

हमीद—नहीं बेवकूफ, देख सामने की खिड़की में।

प्राण—(होठों पर उंगली रखकर) हुश · श श (दबे स्वर से) कुर्सियाँ तनिक इधर खींच लो—यूँ सामने बैठे रहे तो तुम्हें देखकर भाग जाएगी।

हमीद—ईमान से, बहुत खूबसूरत है—मुझे मालूम न था तुम्हारे मुहल्ले में खूबसूरत लड़कियां भी रहती हैं—बस बिल्कुल परी लगती है—उस काली जैकट और आसमानी दुपट्टे में—प्राण, यह है कौन ?

प्राण—यह कमला है। मुझे इससे प्रेम है—अथाह और निस्सीम प्रेम।

हमीद—इसकी निगाहों में एक अनोखी चमक है। कानों में कपकपाते बुन्दे कुन्दन की तरह दमक रहे हैं। गोरी-गोरी कलाइयों में पहनी हुई चूड़ियाँ सूरज की किरणों की चमक से दहक उठी हैं—ईमान से

प्राण—आओ, अब नीचे चलें—यहा अब धूप तेज हो गई है।

हमीद—धूप ? यहा धूप कितनी मीठी है। जी चाहता है सारे दिन यहीं बैठे रहें।

प्राण—(जैसे पाठ दोहरा रहा हो) जो शरीफ लोग होते हैं वह नीचे बैठकों में बैठते हैं जिससे मोहल्ले की औरतें बेफिक्र होकर छतों पर ।

हमीद—प्राण नकल उतारने की तुम्हें बहुत बुरी आदत है।

प्राण—(इसी प्रकार) तो क्या तुम तहज़ीब की अलिफ-बे-पे से भी जानकारी नहीं रखते।

हमीद—प्राण !

प्राण—हमीद !

(दोनों हँस पड़ते हैं)

हमीद—ऐ लो, वह चली गई। आँख झपकते ही ओझल हो गई। यह सब तुम्हारी खता है। वह बेचारी समझती होगी उस पर हँस रहे हैं।

प्राण—घबराओ नहीं—वह फिर आएगी।

हमीद—क्यों, क्या उसे भी तुमसे प्रेम है ?

प्राण—नहीं तो, लेकिन वह आज बहुत खुश है। वह अपनी खुशियों को छिपाना नहीं चाहती। वह चाहती है कि आज उसके मन की खुशी को कोई जान ले, उसके ज्वलन्त सौंदर्य की झलक देख ले, उसकी मादक मुस्कानों की बहार लूट ले। शीघ्र ही उसका ब्याह होने वाला है—बस, कोई पन्द्रह-बीस दिन में। कल रात से उसके घर में ढोलक बजने लगी है। गीत गाये जाने लगे हैं। मिठाई बाँटी जाने लगी है। मुहल्ले की बूढ़ी औरतें शादी की रस्मों पर झगड़ने लगी हैं और नई नवेली दुल्हनें रंगीन रेशमी कपड़े पहने इधर-उधर इतराती फिरने लगी हैं—बेचारी औरतें, यही दो चार दिन तो उनके हँसने बोलने के होते हैं। इन्हीं दो चार दिनों में वे अपनी सहेलियों से मिल सकती हैं—शादी के अवसर पर या मौत के अवसर पर—वरना उनका सारा जीवन घर के दरबों में बन्द गुजर जाता है।

हमीद—कैसी बहकी २ बातें कर रहे हो। कोई काम की बात कहो.. मुझे बताओ कि जब तुम्हें कमला से अथाह प्रेम है तो फिर शादी क्यों न हुई ?

प्राण—शादी ! क्या बच्चों जैसी बातें करते हो। तुम भी निरे गधे हो। अरे भाई, शादी और चीज है, प्रेम और चीज है और फिर हमारे यहां तो शादी के लिए प्रेम एक बिल्कुल बेकार चीज है। हमारी हिन्दुस्तानी सभ्यता में प्रेम जैसी बेकार चीज को कौन पूछता है। यहाँ तो यह पूछा जाता है कि लड़का कितना कमाता है, लड़की का बाप क्या पाता है, कितना धनी है, दहेज में क्या देगा और इसी प्रकार की और कई बातें। मैंने कोशिश तो बहुत की मगर ऐसी ही बातों के चक्कर

मे फँसकर हमारे प्रेम का गला घोट डाला गया। और फिर एक और बात थी। मै और सब बातो पर काबू पा लेता अगर...

हमीद—अगर ?

प्राण—अगर कमला किसी और से प्रेम न करती।

हमीद—ईमान से ?

प्राण—हाँ, कमला को जगदीश से प्रेम है। वह हमारे मुहल्ले ही मे रहता है और सच पूछो तो वह है भी उसके प्रेम के योग्य। मेरी तरह नही कि छछूँदर जैसी सूरत और बास जैसा कद। वह मझोले कद का युवक है, चौड़ी छाती, गेहुँआ रग, सुन्दर आँखें—और कमला तो उसे पूजती है। बी० ए० मे पढता है, पिता रेलवे मे नौकर है, ३००) के लगभग कमाता है। मैंने कई बार कमला और जगदीश को एक दूसरे की ओर टिकटिकी लगाए निहारते देखा है। वैसे तो यह बात मुहल्ले की सब औरतें भली प्रकार जानती हैं। एक बार बड़ा शोर मचा था। कमला के पिता ने जगदीश के पिता से मिलना छोड़ दिया और कमला की माँ और जगदीश की माँ एक दूसरे से रूठ गईं और बात बस इतनी हुई थी कि एक बार मुहल्ले की एक बूढी औरत ने जगदीश और कमला को घर की सीढ़ियों पर हँसते और कानाफूसी करते देख लिया था। बुढ़िया ने वह तूफान उठाया कि

हमीद—अच्छा तो यू कहो कि अब कमला और जगदीश की शादी होगी।

प्राण—अरे नहीं भाई, तुम बात भी तो सुनो।

हमीद—तो क्या कमला ?

प्राण—(बात काटकर) हाँ, मै कहता हूँ कमला की शादी जगदीश

से नहीं हो रही है। उसकी शादी के लिए दोनों घरों में बहुत दिनों तक चर्चा होती रही । धीरे २ औरतें बात पक्की करती रहीं और दोनों घरो मे फिर से पुराने और अच्छे सम्बन्ध स्थापित हो गए। और फिर यह बात सारे मुहल्ले में फैल गई। बूढी औरतें नाक पर उगली रखकर इस ब्याह पर टीका टिप्पणी करने लगीं—"हाय आग लगे इस ज़माने को, लाज न शर्म। जब हमारा ब्याह हुआ था..." और इस तरह की बहुत सी बातें। अब कमला और जगदीश बहुत खुश थे। अब कमला जगदीश के सामने बहुत कम आती और अगर उसका जगदीश से सामना हो भी जाता तो मुस्कराकर और शरीर चुराकर तुरन्त भाग जाती।

हमीद—लेकिन फिर क्या हुआ...

प्राण—फिर एक बात हुई जिसने सारा मामला चौपट कर दिया—A bolt from the blue.

हमीम—वह क्या ?

प्राण—जगदीश मगलीक निकला।

हमीद—मगलीक ?

प्राण—हाँ मगलीक।

हमीद—मगलीक .... क्या यह कोई बीमारी है ?

प्राण—(हसते हुए) ज्योतिषियों और नजूमियों की भाषा में मगलीक उन लड़के-लड़कियो को कहते है जो मगल के दिन पैदा होते है।

हमीद—तो फिर इस से क्या होता है, क्या मगल के दिन पैदा होना कोई पाप है।

प्राण—नहीं। लेकिन जब मुहल्ले के बूढे ज्योतिषी ने दोनों की जन्म-पत्रियाँ देखीं तो उसने सिर हिलाकर कहा, लड़का मंगलीक

है और कमला मगलीक नहीं है, इसलिए यह शादी नहीं हो सकती।

हमीर—मगर क्या शादी के लिए जरूरी है कि लड़का और लड़की दोनों एक ही दिन पैदा हुए हों?

प्राण—सब के लिए तो जरूरी नहीं। लेकिन जो लड़का मगलीक हो वह ऐसी ही लड़की से शादी कर सकता है जो उसकी तरह मगलीक हो, वरना यह शादी लड़की पर भारी होती है—वह या तो शीघ्र मर जातीहै, या उसके सन्तान नहीं होती और जो लड़का मगलीक न होते हुए मगलीक लड़कीसे शादी करले—मेरेमामा ने यही गलती की थी—वे शादी के पूरे ग्यारह महीने बाद मर गए।

हमीव—मगल के दिन।

प्राण—दिन तो मुझे याद नहीं।

हमीव—अच्छा!

प्राण—हाँ, इसलिए कमला का ब्याह जगदीश से नहीं होगा। कमला की सगाई एक और लड़के से हो गई है—नाम है श्यामसुन्दर, लायलपुर का रहने वाला है, शक्ल सूरत से अफ्रीका का हब्शी प्रतीत होता है—छोटी छोटी आँखे, बाहर निकले हुए कान ...।

हमीव—शिश ..., श .. श ... वह खिड़की मे आ गई है। खुदा की कसम कितनी खूबसूरत है, होठां पर कैसी मीठी मुस्कान है—यह खिड़की से नीचे झुककर किसे देख रही है?

प्राण—ठहरो, मैं झरोखे में से देखता हूँ ... गली तो बिल्कुल खाली है।

हमीव—उसके दाहिने बाजू में क्या बँधा है?

प्राण—यह चाँदी के 'कलीरे' हैं। जब लड़कियों के ब्याह के दिन पास आ जाते हैं तो यह 'क़लीरे' उन्हें पहना दिए जाते हैं।

हमीद—प्राण देखो वह मुस्करा रही है और बेचारा जगदीश .

प्राण—हमीद औरत के प्रेम का क्या विश्वास "Woman thy name is frailty."

हमीद—उसके होठों पर मुस्कान चमक रही है, बाजू में बंधे 'कलीरे' उसकी हल्की हरकत से हवा मे झूमने लगते हैं और उस से कैसी मीठी सुरीली झंकार पैदा होती है। यह झुककर किसे देख रही है—प्राण झरोके में से झाँककर देखो तो नीचे कौन है?

प्राण—कोई नहीं, गली तो खाली है।

हमीद—(कुर्सी से उछलकर चीखते हुए) मेरे खुदा, यह क्या हो गया!

प्राण—क्या?

(नीचे गली में से किसी की चीत्कार सुनाई देती है)

प्राण—हमीद, कमला ने खिड़की से नीचे छलाग लगा दी ··ओह!

(उठकर झरोके की ओर भागता है)

हमीद—ओह मेरे खुदा—प्राण, झरोके की ओर न जाओ . . . नीचे झाँक कर न देखो—उफ़, मेरा कलेजा मुँह को आ रहा है।

प्राण—अभागिन कमला · वह जगदीश है—भीड़ को चीरता आ रहा है। उसके सुन्दर बाल माथे पर बिखरे हुए हैं, उसकी आँखों से आँसू बह रहे हैं।

हमीद—मुझसे यह खूनी नजारा नहीं देखा जाता—प्राण, इधर आ जाओ।

प्राण—(मर्मस्पर्शी स्वर में) जगदीश ने उसे अपनी गोद में उठा

लिया--कमला की छाती से खून की धारा बह रही है और गली लाल हुई जा रही है लाल-लाल खून में चाँद के सफेद 'कलीरे' नहा रहे हैं।

हमीद--मेरे अल्लाह · ·· मेरे अल्लाह।

प्राण--कमला की आँखें जगदीश के चेहरे पर जम गई हैं। जगदीश पत्थरकी मूरत बना धरती पर बैठा है ·· ओह, हमीद कमला की आँखें खुली की खुली रह गई--क्या उसकी तृष्णा अब तक न मिटी। एक अन्तिम झटके के साथ कमला का सिर जगदीश की छाती से लग गया--आह अभागिन कमला !

(प्राण झरोके से हटकर अपनी कुर्सी पर आ गिरता है।)

हमीद--(विह्वल कंठ से) प्राण, . . . यह कैसे हो गया--एक चुटकी बजाने में वह मूरत मिट्टी में मिल गई--वह अभी-अभी खिड़की में खड़ी थी।

प्राण--(कातर स्वर में) हाँ हाँ।

हमीद--उसने काले रंग की जाकट पहन रखी थी, उसके सिर पर आसमानी रंग का दुपट्टा था, उसके कानों में बुन्दे झूम रहे थे, उसके बाजुओं में 'कलीरे' बज रहे थे ।

प्राण--(आहत स्वर में) हाँ।

हमीद--मेरे खुदा, मगर मैंने खुद देखा कि उसके चेहरे पर खुशी की चमक थी, उसकी आँखों में मुहब्बत की चमक थी, होंठों पर एक मीठी मुस्कान थी--

प्राण--(धीमे स्वर में) हाँ हमीद, वह अपने प्रियतम से मिलने जा रही थी।

(परदा)